ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

मार्गशीर्ष-पौष, संवत नानकशाही ५३९

दिसंबर **2007** वर्ष १ अंक ४

संपादक
सिमरजीत सिंघ
एम. ए, एम. एस. सी.

सहायक संपादक
सुरिंदर सिंघ निमाणा
एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बीएड.

चंदा

प्रति कापी	३ रुपये
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर { वितरण विभाग **303** ; संपादकीय विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

विषय सूची

गुरबाणी विचार

जिसु सिमरत सभि किलविख नासहि पितरी होइ उधारो ॥
सो हरि हरि तुम्ह सद ही जापहु जा का अंतु न पारो ॥१॥
पूता माता की आसीस ॥
निमख न बिसरउ तुम्ह कउ हरि हरि सदा भजहु जगदीस ॥१॥रहाउ॥
सतिगुरु तुम्ह कउ होइ दइआला संतसंगि तेरी प्रीति ॥
कापड़ु पति परमेसरु राखी भोजनु कीरतनु नीति ॥२॥
अंम्रितु पीवहु सदा चिरु जीवहु हरि सिमरत अनद अनंता ॥
रंग तमासा पूरन आसा कबहि न बिआपै चिंता ॥३॥
भवरु तुम्हारा इहु मनु होवउ हरि चरणा होतु कउला ॥
नानक दासु उन संगि लपटाइओ जिउ बूंदहि चात्रिकु मउला ॥४॥ *(पन्ना ४९६)*

पंचम पातशाह श्री गुरू अरजन देव जी महाराज गूजरी राग में अंकित इस पावन शब्द में गुरू-कृपा द्वारा आत्मिक जीवन की सोझी रखने वाली माता द्वारा अपने पुत्र को सांसारिक मोह-माया से ऊपर उठकर केवल प्रभु-नाम से जुड़कर मूल जीवन-उद्देश्य की पूर्ति करने की आसीस का विवरण देते हैं।

गुरू जी माता का प्रतिनिधत्व करते हुए उसकी ओर से उसके पुत्र को संबोधित करते हुए फरमान करते हैं कि हे पुत्र! उस परमात्मा को स्मर्ण करते हुए समस्त पाप अथवा दुष्कर्म भाग जाते हैं। स्मर्ण करने वाले मनुष्य मात्र की तो बात ही क्या, उसके पूर्वजों का भी कल्याण हो जाता है। उस परमात्मा को तू सदा ही जप, ऐसे परमात्मा को जिसका कोई अंत नहीं है, जिसका दूसरा कोई छोर नहीं।

गुरू जी फरमान करते हैं कि हे पुत्र! तुझे तेरी माता का यही आशीर्वाद है कि तू पलक झपकने जितने समय के लिए भी कहीं भूल न जाए, तू सदैव विश्व के स्वामी को जपता रहे! तुझ पर सच्चे गुरू की कृपा हो जिससे तेरा अच्छे लोगों के साथ भाव प्रभु-नाम में रत-जनों के साथ संग बने! परमात्मा की स्तुति रूप वस्त्र तेरी इज्जत, तेरा सम्मान बनाए रखें। प्रभु का कीर्तन तेरी आत्मा का भोजन हो! तू अमृत नाम रूपी जल को पीये और सदजीवन प्राप्त करे! परमात्मा को याद करने से अत्यधिक आनंद की आत्मिक अवस्था बने! तू नाम के रंग में रत आनंद-प्रसन्न रहे! तुझे कभी सांसारिक चिंताएं न घेरें! तेरा यह मन रूपी भंवरा परमात्मा के चरण-कमलों का प्रेमी बने! गुरू नानक पातशाह की रूहानी ज्योति पंचम पातशाह श्री गुरू अरजन देव जी महाराज 'नानक' नाम का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि हे नानक! परमात्मा का सेवक उन चरण-कमलों से यूं खिला रहता है जैसे पपीहा स्वांति बूंद को पाकर विगास में हो जाता है। ■

संपादकीय

माता गुजरी जी का लासानी व्यक्तित्व व जीवन
आज की सिख स्त्री का प्रेरणा-स्रोत बने!

माता गुजरी जी का व्यक्तित्व अपना उदाहरण स्वयं ही है। अत्यंत मुश्किल परिस्थितियों में से गुजर कर, पारिवारिक कर्त्तव्य निभाते हुए जीवन के अंतिम चरण में आकर माता गुजरी जी ने अपने दो नन्हें-मुन्ने पोतों को सिखी धर्म पर दृढ़ रहने की शिक्षा एवं प्रेरणा देकर जो कार्य कर दिखलाया वह मात्र उन्हीं के हिस्से आ सकता था। माता गुजरी जी का स्थान अन्य किसी स्त्री द्वारा लेना मुश्किल ही नहीं बल्कि असंभव भी है, लेकिन उनके उच्चतम उदाहरण को सामने रखकर उसका अनुकरण करना, उनके पद-चिन्हों पर चलने का प्रयास करना संभव भी है और वांछनीय भी।

माता गुजरी जी मात्र आठ वर्ष के थे जब आपका नवम गुरू श्री गुरू तेग बहादर जी महाराज के साथ विधाता द्वारा लिखित विवाह के पवित्र बंधन द्वारा जीवन-साथ बना। तब गुरू जी का नाम श्री त्याग मल था और आयु मात्र ११ वर्ष। गुरू महाराज का समस्त जीवन प्रभु-भक्ति, त्याग, कुर्बानी, वैराग्य की विस्मादी प्रतिमा के रूप में दृश्टव्य होता है। फिर औरंगजेब के राज्य-काल में विशेष रूप से धार्मिक अन्याय से पीड़ित जन-साधारण को धैर्य बंधाने तथा सत्य-धर्म का प्रसार करने में जो अति ऊंची मंजिलें गुरू जी द्वारा तय की गईं उन सबके पीछे यदि हम गुरू जी के महिल माता गुजरी जी का योगदान स्वीकार करने से चूक रहे होंगे तो यह उनके महान व्यक्तित्व के साथ अन्याय होगा। यह सच्चाई सर्वविदित है कि प्रत्येक महापुरुष की महत्वाकांक्षा के पीछे किसी स्त्री का हाथ होता है। सिख धर्म के संस्थापक गुरू नानक पातशाह के महिल माता सुलक्खणी जी ने इस प्रसंग में प्रथम उदाहरण कायम किया था जो दशकों तक गुरू जी की लंबी प्रचार-यात्राओं में अकेली दो बच्चों की पालना एवं संरक्षण करती रही थीं, बेशक उन्हें बहन नानकी जैसी ननद का साथ पाने का सौभाग्य प्राप्त था।

माता गुजरी जी ने गुरू जी की धर्म प्रचार यात्रा के कई वर्षों के अंतराल में ही बाल गोबिंद राय को जन्म दिया और उनका पालन-पोषण किया। यह पालन-पोषण व संरक्षण भी अपनी मिसाल आप है। पटना से पति को धर्म प्रचार हेतु हंसते-हंसते विदा करने के उपरांत उनको पति के दर्शन आनंदपुर साहिब आकर ही नसीब हुए। फिर जब गुरू जी ने समय के पीड़ित लोगों की, वक्त के राजनैतिक प्रबंध द्वारा छीनी गई धार्मिक स्वतंत्रता दिलाने हेतु स्वयं को कुर्बान करने का निश्चय किया तो भी माता गुजरी जी ने उनका रास्ता नहीं रोका, उन्हें विदा करते वक्त आंसू नहीं बहाये। फिर जब भाई जैता जी गुरू महाराज का कटा हुआ शीश दिल्ली से आनंदपुर साहिब लाये तो जिस शांति एवं धैर्य से माता गुजरी जी ने यह शीश अपनी झोली में स्वीकारा उसकी कल्पना करना भी संवेदनशील मानव हृदय

को महापीड़ित कर देता है। माता गुजरी जी ने वास्तव में जीवन तजुर्बे और सूक्ष्म सूझ-बूझ से आगामी समय में अपना कर्त्तव्य अपने समक्ष रखा था। मात्र नौ वर्ष की आयु में गुरगद्दी पर विराजमान होने वाले अपने सपुत्र श्री गोबिंद राय जी को माता जी की आदर्श अगुआई का लाभ उपलब्ध होने से इंकार करना उपयुक्त न होगा।

माता गुजरी जी को जीवन के अंतिम चरण में पहुंच कर जिन अत्यंत विषम परिस्थितियों में से गुजरना पड़ा उसका ख़्याल करके साधारण मानव मात्र का विचलित व परेशान हो उठना स्वाभाविक है। आनंदगढ़ किले के लंबे घेराव के बाद माता जी सरसा नदी पार करते समय सूनी रात्रि में अकेले रह गए। उनके साथ उनके दो नन्हें-मुन्ने पोते साहिबजादा बाबा जोरावर सिंघ और साहिबजादा बाबा फतेह सिंघ थे, जिनको साथ लिये माता जी अचानक मिले गंगू रसोईया के साथ उसके घर गांव खेड़ी (सहेड़ी) चले गए। गंगू की नीयत खोटी हो जाने से माता जी और छोटे साहिबजादों की परीक्षा अत्यंत कड़ी हो गई। ऐसे वक्त में माता गुजरी जी ने जिस साहस, जिस धैर्य का रूप प्रस्तुत किया वह अपूर्व कहा जा सकता है। यह माता जी की प्रेरणा ही थी कि साहिबजादे सूबा सरहिंद की कचहरी में पूर्णत: चढ़ती कला में रहे और अनेकों लोभ-लालचों, डरावों, चेतावनियों आदि के समक्ष चट्टान की भांति अडोल खड़े रहे और अपने शरीरों का बलिदान देकर अल्प आयु में सिखी सिदक निभाकर सिख कौम के अनुकरण के लिए ठोस पद-चिन्ह छोड़ गए। आगे आने वाला सिख इतिहास इन्हीं बेजोड़ शहादतों पर बना।

आज की सिख स्त्री को, माता जी के व्यक्तित्व व उनके द्वारा जीवन के अंतिम चरण में अपने नन्हें पोतों को दी गई अपने धर्म पर कायम रहने की शिक्षा, प्रेरणा व अगुआई से दिशा लेकर अपने पोतों-पोतियों को धार्मिक विचारों, उसूलों और सिखी सिद्धांतों में परिपक्व करने का कर्त्तव्य निभाना होगा। यदि आज की सिख स्त्री माता गुजरी जी को अपना मुख्य प्रेरणास्रोत बना ले और अपने बच्चों को धर्म के रुहानी और नैतिक मूल्यों में परिपक्वता विकसित करने के अपने कर्त्तव्य को पहचानती हुई इस कर्त्तव्य को निभाने की दिशा में प्रयासरत हो जाए तो हमारी अधिकांश कौमी एवं पंथक समस्याएं स्वत: हल हो सकती हैं। यद्यपि आज सांझी परिवार प्रणाली तेजी से समाप्त हो रही है फिर भी दादी और पोते-पोतियों की परस्पर सांझ अब भी कायम है। दादियों को विशेषकर सिख दादियों को अपने पोतों-पोतियों को धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा देने हेतु प्रयत्नशील होना चाहिए। यदि वे ऐसा करने की दिशा में आज से चलने का प्रण कर लें तो यह माता गुजरी जी के लिए उनकी ओर से जहां सच्ची श्रद्धांजलि होगी वहां वे अपने द्वारा सुचेत-अचेत रूप में भुला दिये गए एक बहुत आवश्यक व महत्वपूर्ण कर्त्तव्य को निभाने की दोबारा शुरूआत करके, अपने जीवन को सफल कर सकती हैं। यह उनके लिए कोई कठिन कार्य नहीं है।

■

अमर कहानी : चार साहिबजादे

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

दसवें पातशाह श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के चारों साहिबजादों ने जो महान शहीदियां प्राप्त कीं उनकी उदाहरण विश्व भर के समूचे इतिहास में कहीं भी नहीं मिलती। चमकौर की गढ़ी में १७ और १४ साल की आयु के दो बड़े साहिबजादों ने (समेत चालीस सिंघों के) दस लाख मुगल सेना से घमासान युद्ध करके उनके छक्के छुड़ा दिए। वे तौबा-तौबा कर उठे। इसी प्रकार सरहिंद में दो मासूम छोटे-छोटे बच्चों ने, जिनकी उम्र उस समय सात और पांच वर्ष की थी, दादा-गुरू की तरह बड़ा साका करके, इतिहास में नया मील-पत्थर स्थापित कर दिया। छोटी उम्र में बाबाओं जैसे महान कारनामे करने के कारण ही सिख इतिहास में, साहिबजादों को सत्कार से "बाबा" विशेषण से भी याद किया जाता है। चार साहिबजादों के नाम इस प्रकार हैं:

साहिबजादा बाबा अजीत सिंघ जी।
साहिबजादा बाबा जुझार सिंघ जी।
साहिबजादा बाबा जोरावर सिंघ जी।
साहिबजादा बाबा फतेह सिंघ जी।

चारों साहिबजादों के बारे में संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:-

साहिबजादा अजीत सिंघ जी : साहिबजादा अजीत सिंघ का जन्म पाऊंटा साहिब में, माता सुंदर कौर जी की कोख से ७ जनवरी १६८७ ई को हुआ। बाकी तीन साहिबजादे माता जीत कौर जी की कोख से पैदा हुए थे। यह ज्ञात हो कि माता साहिब कौर जी को खालसा पंथ की "जगत माता" होने का गौरव प्राप्त था। साहिबजादा अजीत सिंघ जी बचपन से ही तीक्ष्ण बुद्धि, धार्मिक जज़्बे, रूहानीयत के पवित्र रंग में रंगे हुए, निडर, निर्भय, चुस्त-फुर्त शरीर वाले तथा होनहार बालक थे। यही कारण था कि आप ने छोटी आयु में ही तीर चलाना, तलवार चलाना, गतकाबाजी, बंदूक चलाना और घुड़सवारी की अच्छी मुहारत हासिल कर ली थी। आनंदपुर साहिब में गुरू-दर्शनों को आने वाली संगतों को, रास्ते में रंगड़ और गुज्जर लोग लूट लेते थे और बहुत तंग-परेशान भी करते थे। गुरू जी का हुक्म पाकर एक सौ सिंघों को साथ लेकर साहिबजादा अजीत सिंघ ने उन्हें अच्छा सोधा लगाया। उस समय आपकी आयु केवल १२ वर्ष की थी। १७०० ई में जब पहाड़ी राजाओं ने निरमोहगढ़ पर हमला किया, तो साहिबजादा अजीत सिंघ ने बड़ी दिलेरी और निर्भयता से उनका मुकाबला किया। जिस समय बस्सी का हुक्मरान, एक ब्राह्मण (द्वारिका दास) की पत्नी को जबरदस्ती उठा कर ले गया था, उस समय आप जी ने सिंघों की फौज लेकर, डट कर मुकाबला किया और गरीब ब्राह्मण को उसकी पत्नी वापिस लाकर दी। आनंदपुर साहिब का किला छोड़ते समय साहिबजादा अजीत सिंघ और साहिबजादा जुझार सिंघ गुरू जी के साथ थे। इन दोनों साहिबजादों ने चमकौर की गढ़ी में मुगल फौजों का डट कर

**क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, गुरदासपुर-१४३५२१*

मुकाबला किया तथा घमासान युद्ध करके २२ दिसंबर १७०४ ई को शहादत प्राप्त की। उस समय आपकी आयु १७ वर्ष थी।

साहिबजादा जुझार सिंघ जी : आप जी का जन्म आनंदपुर साहिब में माता जीत कौर जी की कोख से १६९० ई में हुआ। बचपन से ही आप तीक्ष्ण बुद्धि, निर्भय, परउपकारी, गुरबाणी और नाम-सुमिरन में रंगे हुए, फुर्तीले शरीर वाले थे। छोटी उम्र में ही आपने घुड़सवारी, गतकाबाजी, तलवारबाजी और बंदूक आदि चलाने की अच्छी मुहारत हासिल कर ली थी। चमकौर के युद्ध में दुश्मन की दस लाख फौजों का डट कर मुकाबला करते हुए, अनेक शत्रुओं को मार कर आप शहीद हुए-

जुझार सिंघ जी पंझी सिंघ नाल लै आए।
हच्छे लड़े तुरक राजे मार मुकाए।
(भाई केसर सिंघ, बंसावलीनामा दस पातिशाहीआं दा)

शहीदी के समय बाबा जुझार सिंघ की उम्र १४ साल थी। आप ने भी २२ दिसंबर १७०४ ई० को शहीदी प्राप्त की।

साहिबजादा जोरावर सिंघ जी और साहिबजादा फतेह सिंघ जी: साहिबजादा जोरावर सिंघ का जन्म २७ जुलाई १६९६ ई० को और साहिबजादा फतेह सिंघ का जन्म ३० अप्रैल १६९९ ई० को माता जीत कौर जी की कोख से आनंदपुर साहिब में हुआ था। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के ये दोनों साहिबजादे आरंभिक काल से ही तीक्ष्ण बुद्धि, धार्मिक रुचियों, नाम के रसिये, निडर और दलेराना स्वभाव के मालिक थे। जब गुरू साहिब ने आनंदपुर साहिब का किला छोड़ा, उस समय ये दोनों साहिबजादे भी गुरू जी के साथ थे। ६-७ पौष रात्रि के समय गुरू जी ने आनंदपुर साहिब का किला छोड़ दिया। दुश्मन फौजों ने कुरान शरीफ की खाई हुई कसमें भूल कर, गुरू जी और सिख फौजों पर हमला कर दिया। इसके फलस्वरूप सरसा नदी के किनारे भयंकर युद्ध हुआ। इसमें गुरू जी का परिवार एक-दूसरे से बिछुड़ गया। बड़े साहिबजादे, गुरू जी और सिख फौजें चमकौर की ओर चली गईं। माता गुजरी जी और दो छोटे साहिबजादे- बाबा जोरावर सिंघ जी और बाबा फतेह सिंघ जी दूसरी ओर चले गए। इस समय उन्हें लगभग दो दशक गुरू-घर का रसोइया रह चुका गंगू ब्राह्मण मिल गया। वह इन्हें अपने गांव खेड़ी (सहेड़ी) ले गया। घर पहुंचकर गंगू ने नमक-हरामी की और बड़ा अकृतघ्न बन गया। लालच में आकर गंगू ने माता गुजरी जी और छोटे साहिबजादों को पुलिस के पास गिरफ्तार करवा दिया। भाई केसर सिंघ के शब्दों में इसको इस प्रकार बयान किया गया है-

नवाब वजीर खां पास पकड़े गए।
सीरंदी जाए दादी-पोते तीनों कैद भए।
(बंसावलीनामा)

सरहिंद के नवाब वजीर खां द्वारा दिए गए कई तरह के लालच, धमकियों और डरावों के बावजूद, ये दोनों छोटे-छोटे बाल निडर रहे और निर्भयता से धर्म पर अडिग रहे, धर्म नहीं छोड़ा। उन्होंने नवाब की कचहरी में ऐसे दलेराना उत्तर दिए जिनको सुनकर सभी चकित रह गए। नवाब वजीर खां को गहरी सोच में देखकर दीवान सुच्चा नंद ने वजीर खां को सलाह दी कि वो इन दोनों साहिबजादों को मार दे-

नवाब वजीर खां सो छोड़ने लाए।
सुच्चे पुरी ने चुगली कर दोनों मरवाए।
(बंसावलीनामा)

२७ दिसंबर १७०४ ई० को साहिबजादों को नीवों में चिन कर, ऊपर से तलवार के वार

से शहीद कर दिया गया। शहीदी के समय दोनों साहिबजादों की उम्र क्रमश: सात और पांच वर्ष की थी। साहिबजादों की महान शहादत और पवित्र खून से रंगी हुई चमकौर और सरहिंद की धरती, आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शक और पूजन-योग्य बन गई।

साहिबजादों की शहीदी का चित्रण किसी पंजाबी कवि ने इस प्रकार किया है:-

खुशी नाल कुरबानियाँ देण चल्ले,
जोड़ी इस पासे जोड़ी उस पासे।
उस वेले सरकार नूं खिच्च है सी,
थोड़ी इस पासे, थोड़ी उस पासे।
इह तां कोई आख नहीं सकदा जे,
जोड़ी इस पासे ते तोड़ी उस पासे।
चारे लाल दशमेश ने वार के ते,
तोड़ी इस पासे ते जोड़ी उस पासे।

अजीत था, जुझार था

*-स. सतिनाम सिंघ 'कोमल'**

गुरू के लाल थे आखिर, और विरसा महान था।
बसना, रहना, खेलना, आनंदपुर की शान था।
ये पलते हैं खूने-दिल से, होते जवान बेटे।
जीवन का बने सहारा, जग में निशान बेटे।
ज़ोरावर थे, फतह थे, अजीत था, जुझार था।
अजीत का तो गुरू के, जरनैलों में शुमार था।
पहाड़ी और मुगल राजे, हार गये हर हार से।
कब तलक आये हाथ गुरू, थे थके इंतज़ार से।
गुरू-परिवार सिख थे, और आनंदगढ़ किला था।
दुश्मनों से घिरा यह, महीनों से सिलसिला था।
गुरू न हार मानेंगे, हमारी न जीत होगी।
आनंदगढ़ न जीता तो, फिर पूछ न प्रतीत होगी।
गाय, कुरान की कसमें, खाने का खत मिला है।
कहेंगे कुछ न जहां जाओ, बस दो, जो आनंदगढ़ किला है।
ये कसमें तो हैं रसमें इनकी, ये निभा न पायेंगे।
पता था गुरू जी को, ये कब वादे निभायेंगे?
महीनों से घिरे सिंघ भी, आजादी के तलबगार थे।
सब्र था तहम्मुल था, बड़े ही खुद्दार थे।
छोड़ आनंदगढ़ रात आधी, पहुंचे जब सरसा किनारे।
होने लगा था जंग भारी, तोड़ कसमें-वादे सारे।
चढ़ी हुई सरसा नदी, वफ़ा न गुरू संग की थी।
अनमोल रचना साहित्य की, सारी ही छीन ली थी।
छीन लिये महिल, माता, लाल दो, गुरू संग लाल दो थे रह गये।
सिंघ चालीस साथ गुरू के, चमकौर की ओर ले गये।
कमीने दुश्मनों ने जा घेरी, कच्ची गढ़ी चमकौर की।
अजीत ने, जुझार ने फिर, जंग लड़ी चमकौर की।
गढ़ी कच्ची सिदक पक्के, दुश्मन तो दस लाख था।
लड़े योद्धा तान सीना, दशम पिता साथ था।
मौत लाड़ी ब्याहने जाते, लौट कर आते न थे।
लड़ते, मारते, मरते थे, मौत से घबराते न थे।
बारी थी जब अजीत की, जरनैल नौजवां था।
जुरअत थी, युद्ध-कला थी, लड़ने में बहुत

**२४८, अरबन अस्टेट, लुधियाना-१०*

रवां था।
दुश्मनों को दुश्मनी उसकी, बहुत महंगी पड़ी।
पड़ा था जहां जिस्म उसका, लाशों पे लाशें चढ़ीं।
योद्धा मैदाने-जंग में, हो गया शहीद था।
आखिर तो दशम गुरू का, लाल था मुरीद था।
इसी वीरता से जूझा, जंग में जुझार था।
ज़ख्म लाये ज़ख्म खाये, शहीद जांनिसार था।
झुका शीश दशमेश का, तेरी अमानत लौटा दी प्रभु!
डरे नहीं वो मौत से, सिखी निभा दी प्रभु!
मेरा कुछ न मेरा है, जो कुछ है सो तेरा है।
तेरा तुझको सौंप दिया, कुछ न लागे मेरा है।
सकते हैं झेल सतिगुरू ही, किसी के बस की बात न।
जो आई है उनपे 'कोमल', आये किसी पे रात न!

■

धरती का जो नूर थे, अब अंबर के तारे बने

सरसा नदी के सितम से, बिखरा गुरू-परिवार था।
हंसते, बसते समय को, ऐसा न इंतजार था।
दादी थी, दो लाल थे, बने गंगू के मोहताज थे।
गांव सहेड़ी ले गया, तीनों रहे विराज थे।
धन, दौलत की चमक ने, कर दिया बेईमान था।
कब कैसे हथियाएं सब, बनाया उसने प्लान था।
रात अंधेरी चुनी है, दौलत चुराने के लिये।
बहाने बनाये बीस हैं, चोरी छिपाने के लिये।
उल्टा माता को कहे, झूठा लगा रहे नाम हो।
मैंने खाया तरस था, तुम लगा रहे इल्ज़ाम हो।
यह तो महंगा पड़ेगा, जो मेरे बारे कहा है।
मैंने खातिर आपकी, हकूमत का खतरा सहा है।
मैं अब लाता अभी हूं, मोरिंडा के कोतवाल को।
ले जायेंगे पकड़ कर, तीनों को तत्काल वो।
'कर न बेटा जुल्म यह, सब कुछ तू संभाल ले।
खाया जिसका नमक है, उसका कर ख़्याल ले।'
गंगू मानी एक न, ले आया कोतवाल को।
मां-बेटे गुरू गोबिंद सिंघ के, तीनों आप संभाल लो।
गंगू नमक हराम ने, यह खोटा कर्म कर लिया।
बज्र पाप उसने, है सिर अपने धर लिया।
ले गये सरहिंद सब को, वजीदे खां के पास हैं।
बेखौफ चढ़दी कला में, न ही हुए उदास हैं।
जब दोनों लालों को, कचहरी बुलाया गया है।
जिंदगी और मौत का, अंतर बताया गया है।
'बदल लेंगे दीन अपना, रखना यह उम्मीद न।
बेटे गुरू गोबिंद सिंघ के, सकेगा कोई खरीद न।'
'बने हो तुम यतीम अब, पिता तुम्हारे रहे नहीं।
भाई तुम्हारे जिंदा नहीं, पंज प्यारे रहे नहीं।'
'कर दे खत्म पिता को, हथियार ऐसा न बना।
झुका सके सिर हमारे, ओहदेदार ऐसा न बना।'
'छोरे बड़े गुस्ताख हैं, जिंदा चिना दो नींवों में!
देखते हैं रोशनी कितनी, है इन दीवों में!'
डरे नहीं ये लाल गुरू के, जिंदा चिने फिर जिबाह हुए।
वो सूरज थे, वो वीर थे, ये फैसले सियाह हुए।
शहीद होकर वो, गुरू गोबिंद सिंघ के प्यारे बने।
धरती का जो नूर थे, अब अंबर के तारे बने।
सुना जब दादी मां ने सब, तन को अलविदा कह दी।
जमाना सुनेगा भर आंखें, जो तूने 'कोमला' कह दी।

■

अमर शहीद छोटे साहिबजादे

*-स. सुरजीत सिंघ**

जहां शहीदों का रक्त गिरता है, वहीं से उगता है हर सवेरा।
जहां जलाता है देह दीपक, वहां न आता है फिर अंधेरा।

शहीद होना विश्व पटल पर किसी समाज, देश, धर्म का सम्माननीय एवं गौरवशाली भविष्य होता है। इसी कारण ही राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण गुप्त ने अपने महाकाव्य 'भारत-भारती' में युगपुरुष सरबंसदानी श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी एवं उनके वीर सपुत्रों के मानवता एवं भारतीय संस्कृति को पूर्णतया समर्पित बलिदानी जीवन के सत्य शाश्वत मूल्यों के त्याग, बलिदान, निष्ठा, वीरता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में शौर्य करुण गाथा का चित्रांकन कर अपनी कलम द्वारा प्रशंसा स्वरूप लिखा है-

जिस कुल जाति देश के बच्चे, दे सकते हों यूं बलिदान।
उसका वर्तमान कुछ भी हो, लेकिन भविष्य है महा महान।

धर्म, आदर्शों-सिद्धान्तों एवं राष्ट्रीय मूल्यों की रक्षार्थ अपने प्राणों की आहूति देने वालों में साहिबजादा बाबा जोरावर सिंघ आयु ७ वर्ष एवं साहिबजादा बाबा फतेह सिंघ आयु ५ वर्ष का सर्वोच्च अविस्मरणीय स्थान है। सिख धर्म की मूल भावना में ईश्वर-कृपा, सेवा और मानवता का परोक्ष दर्शन कराया गया है। सिख सदैव कहता है-*'नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत्त दा भला'*। गुरू जी का उपदेश भी तो है कि सत्य बोलो, सत्य सुनो और सत्य करो, अर्थात सत्य की ही विजय होती है।

ऐतिहासिक आनंदपुर साहिब का किला छोड़ने के उपरान्त २० दिसंबर, १७०४ को कड़कती सर्दी और वह भी रात के समय में उफनती सरसा नदी, जो अत्यन्त तेज वेग से बह रही थी, को पार करते समय माता गुजरी जी और श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के दो छोटे सपुत्र बाबा जोरावर सिंघ एवं बाबा फतेह सिंघ परिवार से बिछुड़ जाने के उपरान्त अपने पुराने नौकर गंगू के साथ उसके गांव खेड़ी (सहेड़ी) चले गये। गंगू द्वारा सूचना पाकर सूबा सरहिंद के नवाब ने माता जी और दोनों गुरू-सपुत्रों को गिरफ्तार कर सरहिंद के किले के ऊपरी हिस्से में बने अत्यन्त ठंडे बुर्ज में यातनाएं देने के लिए कैद कर दिया। कड़कती सर्दी की रात्रि भूखे-प्यासे माता जी और दोनों गुरू-सपुत्रों ने रात्रि ईश्वर-भक्ति में ध्यान-मग्न हो गुजार दी। अगले ही दिन सुबह होने पर मुगल सैनिक आये और नवाब के दरबार में दोनों गुरू-सपुत्रों के हाजिर होने का आदेश माता जी को पढ़ सुनाया।

दादी मां की आशीष और आज्ञा पाकर दोनों गुरू-सपुत्र मुगल हकूमत के नवाब वजीर खां के दरबार में 'सति श्री अकाल' के नारे गुंजाते हुए जा पहुंचे। तेज से सूर्य जैसे दैदीप्यमान दोनों गुरू-सपुत्रों ने जब नवाब के सामने सिर नहीं झुकाया तो दरबार में हलचल

***५७-बी, न्यू कॉलोनी, गुमानपुरा, कोटा (राजस्थान)*

मच गयी और सन्नाटा छा गया। गुस्से में तमतमाए नवाब ने आग-बबूला होकर गुरू-सपुत्रों से इसका कारण पूछा, तो गुरू-सपुत्रों ने एक ही स्वर में कहा-'हमारा शीश तो सिर्फ ईश्वर और गुरू जी के सामने ही झुकता है, किसी अत्याचारी के आगे नहीं।' गुरू-सपुत्रों को फुसलाने की चेष्टा करते हुए नवाब व दरबारी मंत्री गुरू-सपुत्रों को तरह-तरह के लोभ-लालच के प्रलोभन देने लगे किन्तु गुरू-सपुत्र जिनके अंत:करण में धर्म, सेवा, भारतीय संस्कृति की रक्षा आदि सभी अच्छी विशेषताएं और मानवता की रक्षा का भाव संचारित था, उन्होंने प्रलोभन की बात को अनसुना कर दिया:

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥
(पन्ना १४२७)

-चाह नहीं मै सुरबाला के बालों में गूंथा जाऊँ।
चाह नहीं मैं पूजा की थाली में ही शोभा पाऊँ।
मुझे तोड़ लेना वन माली उस पथ पर तुम देना फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जाएं वीर अनेक।

दोनों गुरू-सपुत्र अडोल व अडिग रह कर ईश्वर-भक्ति में ही ध्यान मग्न रहे और केवल यही कहा-*'बहादुर कभी मौत से डरते नहीं हैं।'* इसी प्रकार लगातार तीन दिन तक गुरू-सपुत्रों को तरह-तरह के प्रलोभन देने का सिलसिला चलता रहा किन्तु गुरू-सपुत्र तो सिद्धांत से टस से मस भी नहीं हुए और न ही कभी कोई भय माना। वे न तो किसी लालच में आये और न ही भयभीत हुए क्योंकि उनको तो गुरबाणी का ही आश्रय था और वे निर्भय व निडर हो चुके थे। हार कर चौथे दिन नवाब ने एक गहरी चाल के तहत दरबार के मुख्य द्वार को बंद करवा कर उसमें एक छोटा सा खिड़कीनुमा दरवाजा लगवा दिया, ताकि अंदर आते समय विवशतावश एकाएक ही उनका सिर स्वत: ही झुक जाये और जिसको गुरू-सपुत्रों का अभिवादन मान लिया जाये। गुरू-सपुत्रों ने इस घृणित चाल को नकारते हुए खिड़कीनुमा छोटे दरवाजे से प्रवेश करते समय पहले अपने पांव, फिर टांगों को अंदर की तरफ डाला और सिर पीछे की तरफ ही तना हुआ ऊंचा रखकर अंदर किया और दरबार में आकर जोर से पुकार कर कहा-*'कभी दरिया रुके नहीं, कभी पर्वत झुके नहीं। हम गुरू गोबिंद सिंघ के बच्चे हैं। धर्म-ईमान के बिलकुल सच्चे हैं। नहीं, हम झुक नहीं सकते, नहीं, हम रुक नहीं सकते। हमें निज धर्म प्यारा है, गुरू पंथ प्यारा है।'*

अमृत के दाते श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का भी क्या खूब जिगरा था कि मानवता की रक्षा हेतु कुल वंश ही न्यौछावर कर दिया!

सभी चालें और फिर कठोर यातनाओं की धमकियां असफल होने पर बौखलाये सरहिंद के नवाब ने गुरू-सपुत्रों को भूखे-प्यासे ही जिंदा सिकड़ी दीवार में चुनवा कर कत्ल कर देने का कठोर आदेश दे दिया। इस पर गुरू-सपुत्रों ने कहा, "यह कोई नई बात नहीं है क्योंकि शहीदी का खून तो हमारे शरीर की रग-रग में संचार कर रहा है। हमारे पूर्वज खुशी-खुशी गर्म खौलते हुए पानी की देगों में उबाले गए और गर्म लालसुर्ख तवों पर बैठ कर अपने तन पर गर्म-गर्म लालसुर्ख रेता डलवाना स्वीकार किया, आरे से चीर कर शरीर के दो फाड़ करवाये, उन्हें तो सम्पूर्ण शरीर पर रूई बांध कर तेल डालते हुए जिंदा ही आग को समर्पित कर तिल-तिल कर जलने दिया गया। आपके जी में जो आये करके देख लो। सबको अपने किये का मोल

चुकाना पड़ता है। अब दोनों गुरू-सपुत्रों को बीच दीवार में जिन्दा ही खड़ा कर दिया गया और बहुत सिकड़ी दीवार की चुनाई का कार्य ईंट-गारे से जारी रखते हुए उनके शरीर का कोई-सा भी अंग आड़े आने पर बेरहमी से लहूलुहान कर काट दिया जाता था। ऐसा हृदयविदारक दृश्य देखकर तो लोग त्राहि-त्राहि कर उठे, किन्तु आश्चर्य कि दोनों गुरू-सपुत्र चेहरे पर शिकन लाये बगैर ही अविचल सीना ताने पूर्ववत खड़े रहे और ईश्वर की रज़ा को स्वीकार करते रहे। किसी कवि ने कहा है:

जो आशक हैं शहादत के, वो जीना छोड़ देते हैं।
खिलौना समझकर तन को, खुशी से फोड़ देते हैं।
न तख़्तो-ताज, न हूरो-जन्नत की चाहत है,
खुदा ग़र खुदाई भी दे, तो वापिस मोड़ देते हैं।

भक्त कबीर जी का कथन है:

सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

श्री गुरू नानक देव जी का कथन है:

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥ सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ *(पन्ना १४१२)*

शनैः-शनैः बन रही ईंटों की दीवार दोनों गुरू-सपुत्रों को बीच में दबाती और समाती हुई ऊपर उठती चली जा रही थी। बाबा फतेह सिंघ आयु में बाबा जोरावर सिंघ से २ वर्ष छोटे थे, अतः दीवार पहले उनके गले तक आ पहुंची। यह देखकर बड़ा भाई बाबा जोरावर सिंघ सजल नेत्रों से कहने लगा-"छोटे वीर! बड़ा होने के नाते शहीद होने का अधिकार तो पहले मेरा था किन्तु तू छोटा होने के उपरान्त भी पहले शहीद होने का मेरा हक छीनते हुए सत्य-धर्म पर मेरे से पहले ही कुरबान हो रहा है।" दीवार सिर से ऊपर जाते ही क्रमशः दोनों गुरू-सपुत्रों ने ईश्वर का धन्यवाद कर गरज कर जयघोष किया-'सिख पंथ की जीत!गुरू पंथ की जीत! खालसे की जीत! बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के गुंजायन के साथ दोनों गुरू-सपुत्र बेहोशी की हालत में शांत हो गए। नवाब वजीर खां ने उन्हें दीवार से बाहर निकालकर देखा तो अभी गुरू-सपुत्रों की सांसें चल रही थीं। निर्दयी नवाब ने शाशल बेग और बाशल बेग नामक दो जल्लादों के हाथों दोनों गुरू-सपुत्रों के पावन-कोमल शीश नन्हें-नन्हें धड़ों से अलग करवा दिए। इस प्रकार सत्य-धर्म की वेदी पर दोनों छोटे साहिबजादे अमर शहीदी को प्राप्त कर गये और वह अभागा दिवस १३ पौष सं: १७६१ का था। धन्य हैं सरबंसदानी श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी और धन्य हैं उनके बलिदानी गुरू-सपुत्र जिन्होंने अपनी पुन्य अमर गाथाओं से भारत-भूमि को पवित्र व गौरवान्वित कर दिया। इसी पवित्र भूमि पर उनकी शहीदी की याद में गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहिब बना हुआ है।

गुरू-सपुत्रों की शहीदी का समाचार पाकर सरहिंद के किले ठंडे बुर्ज में कैद माता गुजरी जी ने ईश्वर का धन्यवाद किया कि गुरू-सपुत्रों ने अपनी शहादत देकर सिख परम्परा का गौरव द्वि-गुणित किया है। अंत में ईश्वर के ध्यान में आंखें बंद कर 'वाहिगुरू' का उच्चारण करते हुए माता जी भी परलोकगामी होकर-*'सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम'* के महावाक्यानुसार अकाल ज्योति में विलीन हो गयीं। उनकी याद में वहां पर गुरुद्वारा ठंडा बुर्ज बना हुआ है।

माता जी और गुरू-सपुत्रों का विधिवत दाह सस्कार करने के लिए जितनी जगह की

(शेष पृष्ठ १४ पर)

गुरू तेग बहादर जी के जीवन एवं उनकी बाणी की समकालीन प्रासंगिकता

*-बोस्की मैंगी**

भारत के धार्मिक, साहित्यिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन के इतिहास में सिख पंथ के गुरू साहिबान की परम्परा का एक अपना ही विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान है। श्री गुरू नानक देव जी ने विश्व-प्रेम, शांति, सेवा-भाव, एकात्मता एवं सत्य का अमर संदेश और समाज की जीवन-धुरी को आलोकित करने वाली प्रकाश-किरण प्रसारित की। इसी आलौकिक प्रकाश-किरण को 'हिंद की चादर' कहलाने वाले नवम् गुरू श्री गुरू तेग बहादर जी ने देशाटन और भ्रमण कर देश के कोने-कोने में पहुंचाया और *'भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन'* के नाद में समस्त मानवता को 'निर्भयता' का पाठ पढ़ाया। उनकी चेतना चिरंतन, शाश्वत और सार्वभौमिक है, जो किसी युग एवं जाति विशेष की कारागार में कैद नहीं बल्कि स्वच्छंद है। उनकी दिव्य बाणी उस युग में भी संगत थी, आज भी संगत है और भविष्य में भी भटके हुओं के लिए ध्रुव का कार्य करती रहेगी।

वर्तमान देश की उन्नति, साम्प्रदायिक एकता, प्रादेशिक एकता, भाषकीय एकता तथा मानव के मानवीय धरातल की एकता पर निर्भर है। यह दृष्टि श्री गुरू तेग बहादर जी ने औरंगजेब काल में ही प्रस्तुत कर दी थी। साम्प्रदायिक एकता की मिसाल इससे अधिक कहां मिल सकती है कि गुरू जी स्वयं किसी अन्य सम्प्रदाय की रक्षा हेतु आत्म-बलिदान देने को तैयार हो गए थे। वर्तमान दौर में जिस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में अराजकता फैल रही है, मानव का धर्म है कि वह भी गुरू जी के पद-चिन्हों पर चलते हुए साम्प्रदायिक एकता को अपना लक्ष्य बनाए। अपने उदात्त दृष्टिकोण के कारण गुरू जी ने सभी धर्मों के मनुष्यों को भाई-बंधु स्वीकार किया। सूफी फकीर सरमद को प्राण-दण्ड दिये जाने पर सर्वाधिक सशक्त विरोध श्री गुरू तेग बहादर जी द्वारा ही किया गया था जो कि उनके साम्प्रदायिक एकता की ओर संकेत करता है।

लक्ष्य-प्राप्ति का औचित्य भी गुरू जी ने समाज के समक्ष रखा। वर्तमान में मनुष्य अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अधीर हो रहा है। वह किसी भी मार्ग को अपनाकर लक्ष्य प्राप्त करना चाहता है। व्यक्ति-मन में प्राप्ति की लालसा प्रधान है, परन्तु प्राप्त क्या करना है और कैसे करना है, इससे बेखबर है। गुरू जी ने ऐसे अधीर, बेचैन मानव को जीवन के लक्ष्य-प्राप्ति के ढंग सिखाने का प्रयत्न किया। जब गुरू जी के श्रद्धालुओं ने धीरमल से उसकी सभी वस्तुएं छीन लीं तो स्वयं गुरू जी ने सभी वस्तुएं लौटाने को कहा। श्रद्धालु-जन 'आदि ग्रंथ साहिब' की बीड़ नहीं लौटाना चाहते थे, परन्तु गुरू जी के अनुसार 'बीड़' प्राप्त करने का यह अनुचित ढंग था। आज के संदर्भ में देखा जाए तो आज का मानव इस औचित्य से कोसों दूर है। वर्तमान प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ रहा भ्रष्टाचार भी व्यक्ति की प्राप्ति की लालासा से ही होता

**लैक्चरार, हिन्दू कन्या महाविद्यालय, धारीवाल (गुरदासपुर)।*

है। यदि मानव गुरू जी की तरह सही ढंग अपना ले तो उसके जीवन का समस्त भटकाव, तनाव और व्याधियां स्वत: नष्ट हो जाएंगी।

वैज्ञानिक युग के चलते मनुष्य को चाहे सभी सुख-सुविधाएं व आराम प्राप्त हुए हैं फिर भी मन में भटकाव और अशान्ति निरन्तर बनी हुई है। कारण स्पष्ट है—उसका अंतर्मुखी न होकर बहिर्गामी होना। आंतरिक विकास की अपेक्षा आज का मानव भौतिक विकास में लीन हो गया जो कि अशांति का कारण है। गुरू जी ने लगभग बीस वर्ष तक 'आंतरिक विकास' हेतु बाबा बकाला में प्रभु-नाम का गहन् स्मर्ण एवं चिंतन किया और 'निज' पर विजय प्राप्त करके संसार के लिए प्रकाश-स्तंभ बने। वर्तमान मनुष्य दूसरों को अपने विकास में रुकावट समझता है और उसे मिटाने एवं आत्म-रक्षा हेतु हिंसावादी प्रवृत्ति का प्रश्रय लेता है। विश्व-शांति हेतु बड़े-बड़े विनाशकारी युद्ध लड़े जा रहे हैं जिससे मानवता का ह्रास हो रहा है। विश्व-शांति की आड़ में विकसित देशों के बीच एक-दूसरे को पिछाड़ने की होड़ लगी हुई है। ऐसी परिस्थितियों में न तो देश आंतरिक एवं वाहृय शांति प्राप्त कर सकता है और न ही मानव। विज्ञान मानव को कुछ पल के लिए आराम दे सकती है, जिंदगी भर का सकून नहीं। सकून-प्राप्ति के लिए व्यक्ति को गुरू जी की तरह अध्यात्मवादी होना पड़ेगा और शांति के लिए मनुष्य को गुरू जी के संदेश *भै काहू कउ देत नहि* पर अमल करना पड़ेगा। इस प्रकार गुरू जी का संदेश, जो उस समय के लोगों के लिए प्रासंगिक सिद्ध हुआ, आज भी प्रासंगिक है।

विषम परिस्थितियों में धैर्य भाव रखना श्री गुरू तेग बहादर जी के व्यक्तित्व का अनन्य गुण है। उन्होंने मुश्किल परिस्थितियों में भी धैर्य नहीं छोड़ा बल्कि अविचल और अडिग बने रहे, जैसे कि बलिदान देते वक्त, उन्होंने न तो इस्लाम धर्म स्वीकारा, न ही चमत्कार दिखलाया, बल्कि मृत्यु का वरण श्रेयस्कर समझा। इस प्रकार गुरू जी की पावन बाणी व्यक्ति-हृदय को धैर्य बनाए रखने की प्रेरणा भी देती है।

वर्तमान में मनुष्य अपने 'अहं' के कारण दूसरों के अस्तित्व को मिटाना चाहता है, अपनी स्वार्थ-सिद्धि हेतु दूसरों के विनाश की कामना करता है। वह अपनी शक्ति के कारण अहंकारी होकर उसका दुरुपयोग करने लगता है। फलस्वरूप वह स्वयं तो डूबता ही है औरों को भी अपना ग्रास बना बैठता है। गुरू जी ऐसे मनुष्यों को इस अमूल्य जीवन को उचित ढंग से परिचालित करने का संदेश देते हैं:

जो प्रानी ममता तजै लोभ मोह अहंकार ॥
कहु नानक आपन तरै अउरन लेत उधार ॥
(पन्ना १४२६)

गुरू जी ने व्यक्ति में बढ़ रही 'धन-लालसा' पर भी कटाक्ष किया है। आज मनुष्य की अशांति का सबसे बड़ा कारण धन-लालसा ही है। धन-लालसा हेतु यह किसी भी सीमा को लांघने के लिए तैयार है। ऐसे प्राणियों को चेतना प्रदान करते हुए गुरू जी फरमान करते हैं:

बिरथा कहउ कउन सिउ मन की ॥
लोभि ग्रसिओ दस हू दिस धावत
आसा लागिओ धन की ॥
सुख कै हेति बहुतु दुखु पावत
सेव करत जन जन की ॥
दुआरहि दुआरि सुआन जिउ डोलत
नह सुध राम भजन की ॥
मानस जनम अकारथ खोवत
लाज न लोक हसन की ॥

नानक हरि जसु किउ नही गावत
कुमति बिनासै तन की ॥ (पन्ना ४११)

आज की राजनैतिक व्यवस्था वर्तमान की देन कही जाती है, परन्तु वैचारिक दृष्टिकोण से सदा समन्वय स्थापित करने वाले महापुरुष युग-युग से इस 'प्रजातांत्रिक व्यवस्था' को घोषित करते हुए इसे श्रेष्ठतर स्वीकार करते आए हैं। श्री गुरू तेग बहादर जी तथा उनके पूर्वजों ने यही कार्य किया। गुरू जी व उनके पूर्वज गुरू साहिबान ने पंथक प्रणाली में प्रजातांत्रिक प्रयोग किए। गुरू का घर सामान, बहुजन हिताय का दृष्टिकोण, जात-पात तथा भेद-भाव का निराकरण आदि विचार प्रजातांत्रिक व्यवस्था की ओर ही संकेत करते हैं। वर्तमान प्रजातंत्र गुरू-प्रदत्त उन्हीं नियमों और आदर्शों पर केंद्रित होकर विशेष सफलता को प्राप्त हो सकता है। अत: आज की व्यवस्था में गुरू जी का जीवन और उनकी बाणी अत्यधिक प्रभावी और प्रासंगिक प्रतीत होती है।

सारांश: कहा जा सकता है कि आज के वैज्ञानिक व धन-प्रधान समाज में व्यक्ति लक्ष्य-प्राप्ति की ओर होते हुए अपने अस्तित्व को निरर्थक मानने लगा है, जिस कारण वह सामाजिक प्रवाह से एकदम टूट कर अलग और विसंगत अनुभव करने लगा है, परन्तु यदि वह सामाजिक धारा से जुड़कर, कार्यरत होकर, असफलताओं से निराश न होकर पथ-अग्रसर हो तो वास्तविक लक्ष्य प्राप्त कर सकता है। इसलिए मेरे दृष्टिकोण से आज के परिपेक्ष में श्री गुरू तेग बहादर जी की बाणी सर्वव्यापक अर्थों में प्रासंगिक प्रमाणित हो सकती है। आवश्यकता है उनकी बाणी रूपी सागर में गहराई तक जाकर जीवन-लक्ष्य रूपी अमूल्य-रत्न प्राप्त करने की, उनकी बाणी को अपनाने की। ■

अमर शहीद छोटे साहिबजादे *(पृष्ठ ११ का शेष)*

आवश्यकता थी दीवान टोडरमल को मुगल हकूमत की शर्त को मानते हुए उतनी जगह पर सोने की मोहरें बिछा कर भूमि की कीमत अदा करने के उपरान्त ही जगह उपलब्ध हो सकी। ठंडे बुर्ज से माता जी तथा गुरू-सपुत्रों के शव लाकर विधिवत श्रद्धापूर्वक दाह सस्कार कर दिया गया जहां ऐतिहासिक गुरुद्वारा 'जोती-सरूप' बना हुआ है, जो ऐतिहासिक गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहिब से एक किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। सत्य, निष्ठा, आस्था, त्याग, प्रेम, सहनशीलता की मिसाल बना यह अनूठा बलिदान देश-धर्म, तथा राष्ट्रीय संस्कृति के यथार्थ को दृष्टिगत रखते हुए जन-चेतना और जन-हित की भावना परिलक्षित कर स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व के परमार्थ को स्थापित करता है जो सदियों-सदियों तक अविस्मरणीय रहेगा। ■

आपका पत्र मिला

गुरबाणी के अर्थ भी दिया करें

सितंबर २००७ अंक नए रूप-कलेवर में देखा, मन प्रसन्न हो गया। गुरुओं की अमृत-बाणी का प्रचार-प्रसार हिंदी में भी हो रहा है, यह प्रशंसनीय है। परंतु गुरुओं की अमृत-बाणी का अर्थ हिंदी में नहीं दिए जाने से उनके भावों को हृदयंगम करने में कठिनाई होती है। जैसे सितंबर के अंक में पृष्ठ ९ पर प्रकाशित-'जिनी नामु . . . छुटी नालि' का अर्थ नहीं होने से समझने में कठिनाई हो रही है। कृप्या भविष्य में इस ओर भी ध्यान देकर गुरुओं की पवित्र बाणी का हिंदी अर्थ भी दें। -श्याम सुन्दर गुप्ता।

सुप्रसिद्ध विद्वानों की दृष्टि में श्री गुरू ग्रंथ साहिब

*-स. कृपाल सिंघ**

दशमेश पिता श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने अपने महानिर्वाण के समय १७०८ ई में यह निर्णय लिया कि उनके बाद अब कोई देहधारी गुरू नहीं होगा। अब श्री गुरू ग्रंथ साहिब गुरू-पद पर आसीन होंगे जिसमें ६ सिख गुरुओं सहित हिन्दू, मुस्लिम और सिख धम के संतों, पीरों और फकीरों की बाणी दर्ज की गई है। उन्होंने कहा:

आगिआ भई अकाल की तबै चलायो पंथ।
सब सिक्खन को हुकम है गुरू मानीओ ग्रंथ।
(पंथ प्रकाश, कृत ज्ञानी ज्ञान सिंघ)

१४३० पृष्ठों, १२ भाषाओं और ३१ रागों का यह पावन ग्रंथ पूरे देश का प्रतिनिधित्व करता है क्योंकि इसमें कई प्रदेशों के भक्त-कवियों की रचनायें अंकित हैं। सन् १६०४ में जब पहली बार इस पावन बीड़ का प्रकाश श्री गुरू अरजन देव जी ने श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में किया तब से आज ४०० से अधिक वर्ष बीत जाने के बाद भी विश्व का यह एक अकेला ग्रंथ है जिसे गुरू की पदवी से सुशोभित होने का सौभाग्य और गौरव प्राप्त है। सभी जातियों, धर्मों एवं प्रांतों का प्रतिनिधित्व करने वाला यह पावन ग्रंथ इस अटल सिद्धांत पर मानवता के गुरू के रूप में पूजनीय है:

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)

जो बारम्बार कहता है:

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे॥ एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (पन्ना १३४९)

किसी भी प्रकार का सैद्धान्तिक विरोध, वैचारिक विरोध न रखने वाला यह पावन ग्रंथ कहता है *'इका बाणी इक गुर इको सबद वीचार ॥'* जिसमें केवल मानवता एवं सच्चाई के सिद्धांत अपनाये गये हैं। वास्तव में पंचम पातशाह श्री गुरू अरजन देव जी ने इस महान ग्रंथ के माध्यम से मानवी एकता, धर्म निरपेक्षता एवं अखण्डता का जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसीलिए श्री गुरू ग्रंथ साहिब केवल सिख धर्म का ही नहीं अपितु समस्त मानवता की अमूल्य निधि है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने गुरू की गरिमा प्रदान करके विश्व के सभी भक्तों को शब्द के माध्यम से प्रभु को खोजने का संदेश देते हुए श्री आदि ग्रंथ साहिब को गुरुत्व प्रदान किया। आम आदमी की समझ में आने वाली भाषा का प्रयोग करते हुए रागों में बाणी की रचना, पढ़ने-सुनने वालों के मनों पर अपना अमिट स्थान बना लेती है। मानव की भावनाओं में राग कला का अपना महत्व है। संगीत आत्मा को शुद्ध करता है तथा आत्मा की मैल को धो डालता है। इसकी बाणी सभी समझ सकें और अपने हृदयों में बसा लें इसीलिए आसान भी है। मानव द्वारा ईश्वर की भक्ति को पूर्ण सत्कार देने की ही दृष्टि से प्रभु को ६५ से भी अधिक नामों से पुकारा गया है। हरि, राम, प्रभु, गोपाल, अल्लाह तथा खुदा शब्दों

*** C/o** *बैंक आफ बड़ौदा, अंचल निरीक्षण केंद्र, चौथा तल, आनंद भवन, संसारचंद्र रोड, जयपुर-०१*

का प्रयोग अनेकों बार किया गया है, इस पावन ग्रंथ में।

'ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई' के प्रचारक श्री गुरू ग्रंथ साहिब के बारे में डा. राधा कृष्णनन् लिखते हैं कि 'श्री गुरू ग्रंथ साहिब की अटल सच्चाई तथा अटूट भक्ति के सम्मुख पर्वतों तथा सागरों की समस्त सीमाएं जो एक देश को दूसरे देश से अलग करती हैं, स्वत: समाप्त हो जायेंगी।' नोबेल पुरस्कार विजेता श्रीमती पर्ल बक ने कहा, 'गुरू ग्रंथ साहिब विचारों एवं भावों का मूल स्रोत हैं। मैंने विश्व के अन्य महान धर्म ग्रंथों का अध्ययन किया है पर मेरे दिलो-दिमाग को जितना गुरू ग्रंथ साहिब ने प्रभावित किया उतना किसी ने नहीं। इसमें अंकित इलाही ज्ञान, मानव-मन की असीमित विशालता का प्रमाण है। इसमें श्रेष्ठ ईश्वरीय संकल्प के बारे में सूझ एवं विचारों से लेकर मानव शरीर की व्यवहारिक आवश्यकताओं की पूर्ति तक को मान्यता प्राप्त है।' प्रसिद्ध इतिहासकार टायनबी का कथन है—'गुरू ग्रंथ साहिब मानवता की सर्वसांझी आध्यात्मिक निधि की विरासत है। यह समस्त धार्मिक ग्रंथों में सबसे अधिक सम्मानित ग्रंथ है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब सिखों का गुरू है तथा सभी धर्मों की होने वाली गोष्ठियों में इसकी आवाज सारे संसार के लिए निश्चय ही लाभदायक होगी।'

प्रसिद्ध विद्वान डॉ. ग्रीन लीज लिखते हैं— 'गुरू ग्रंथ साहिब निश्चय ही संसार भर के साहित्य में काव्य कथा के पक्ष में उत्कृष्ट रचना है। गुरू ग्रंथ साहिब भारतीय दर्शन व आध्यात्म का तत्व ज्ञान है पर इसे संकीर्ण साम्प्रदायिक अर्थों में हिन्दी फिलासफी का निचोड़ कहना उचित नहीं अपितु इसे तो मानव विचारधारा कहना समुचित है। जैसे-जैसे मैं गुरू ग्रंथ साहिब का अध्य्यन करता गया वैसे-वैसे गुरबाणी मेरे मन को प्रेमजाल में जकड़ती गई।' प्रसिद्ध दार्शनिक मैकालिफ ने कहा है– 'गुरू ग्रंथ साहिब ही ऐसा ग्रंथ है जिसमें गुरुओं की बाणी अपने द्वारा लिखित एवं एकत्रित की गई है। अरब के पैगम्बर मोहम्मद साहिब ने कुरान की आयतों को अपनी कलम से नहीं लिखा। ईसाई मत के हज़रत ईसा मसीह ने भी अपने शिष्यों को अपनी कोई रचना लिखित नहीं दी। बुद्ध मत के महात्मा गौतम बुद्ध ने भी अपने आदर्शों को लिखित रूप में नहीं छोड़ा परन्तु सिख गुरुओं ने अपनी बाणी स्वयं द्वारा उच्चारित एवं लिपिबद्ध की है।'

प्रसिद्ध ईसाई मिशनरी मिस चार्ल्ट ने कहा, 'जहां तक मैंने गुरू ग्रंथ साहिब का अध्य्यन किया है, मैंने महसूस किया है कि यह एक बड़ा विचित्र ग्रंथ है तथा इसमें हैरान कर देने वाली निर्मलता और आत्मिक सत्य है। गुरू ग्रंथ साहिब आत्मिक शांति एवं तृप्तिपूर्ण ग्रंथ है और मुझे शर्म आती है कि मैं इन सिखों से आत्मिक परिपक्वता से बहुत पीछे हूं।' अछूतों और पिछड़ों के मसीहा तथा प्रसिद्ध कानूनदां डॉ. अम्बेडकर ने कहा-'अछूत और पिछड़े वर्ग के लोगों को जितनी आत्मिक शांति और सामाजिक तृप्ति 'गुरबाणी' प्रदान कर सकती है, अन्य किसी भी मत का कोई ग्रंथ नहीं कर सकता। 'गास्पल ऑफ गुरू ग्रंथ' में डॉ. ग्रीनलीज ने लिखा- 'पवित्रता और रूहानीयत में दुनिया के धर्मों से इसका ऊंचा मुकाम है। यह किसी का बदलता रूप नहीं। गुरू ग्रंथ साहिब का रुतबा चोटी का है। यह बात यकीनन कही जा सकती है कि बाणी आकाश और हृदय के आंतरिक प्रकाश से उत्पन्न हुई है। यह किसी के पढ़ने-सुनने से सम्बंध नहीं रखती तथा यह समस्त

मानवता का समान रूप से आध्यात्मिक भण्डार है। यह तो कहीं महसूस ही नहीं होता कि यह किसी विशिष्ट सम्प्रदाय का ग्रंथ है, यह तो मानव मात्र का ही ग्रंथ है और यही गुरू ग्रंथ साहिब की आलौकिकता है।'

भारत के गौरव, नोबेल पुरस्कार विजेता श्री रविन्द्र नाथ टैगोर से पूछा गया है कि यदि विश्व के लिए अन्तर्राष्ट्रीय गीत बनाना हो जिससे सारे संसार को प्रतिनिधित्व मिल सके तो टैगोर ने श्री गुरू नानक देव जी की उस पावन बाणी की ओर इशारा किया जिसमें सूर्य और चन्द्र—दीपक रूप में, तारे—मोती रूप में, पवन—सुगन्धित धूप व समूची प्रकृति—फूलों और पत्तियों के रूप में आकाश रूपी थाल में सजे हैं जिसके द्वारा प्रभु की निरंतर आरती की जा रही है। इसी से कल्पना करें कि यदि श्री गुरू नानक देव जी का एक शब्द समूची मानवता का प्रतिनिधित्व करने की सामर्थ्य रखता है तो श्री गुरू ग्रंथ साहिब अवश्य ही मानवता के गुरू हुए।'

भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ राधाकृष्णनन् जी लिखते हैं—'श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में हमें मानवता की अनुभूति, भावनाओं का अद्‌भुत रूप, ईश्वर के अस्तित्व का गहन वर्णन और ईश्वरीय प्रेम का एक उद्वेलित कर देने वाला संगीत मिलता है। सागर और पर्वत की सीमाओं से भी आगे है वह सत्य जो श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में एक अद्‌भुत उद्‌गार और भक्ति से वर्णित किया गया है।' स्वामी रामतीर्थ दंडी सन्यासी जी का कथन है-'गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी महाकल्याणकारी है क्योंकि इसका सदोपदेश मनुष्य जाति के किसी एक वर्ग के लिए नहीं बल्कि समूची मानवता के लिए है। इसमें किसी एक वर्ग के हितों को प्रमुखता देने के लिए किसी कपट रूपी कर्मकाण्ड का वर्णन नहीं मिलता बल्कि मानवीय जीवन को पूर्ण सफलता के लिए केवल अकाल पुरख की भक्ति का ही अति सुगम मार्ग बताया है।'

प्रसिद्ध विद्वान मोहम्मद आसिफ खान फरमाते हैं—'दुख की बात यह है कि हम मुसलमान, श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को केवल सिखों की पवित्र धार्मिक किताब समझकर उसकी ओर आकर्षित न हो सके। हमने उन्हें पढ़ने की भी तकलीफ न की। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में १२वीं सदी से लेकर १७वीं सदी तक की बोली, भाषा, समाज तथा सोच के कितने माणिक मोती पिरोये हुए मिलते हैं। यही नहीं, बाकी धर्मों के अलावा इसमें मुसलमान भक्तों की बाणी भी अंकित की गई है।' जनाब अखलाक हुसैन देहलवी का कहना है—'पवित्र गुरू ग्रंथ साहिब सिख धर्म का एक आदरणीय धर्म ग्रंथ ही नहीं अपितु हिन्दोस्तान का पहला धर्म-निरपेक्ष ग्रंथ है जिसका संकलन श्री गुरू अरजन देव जी ने सन् १६०४ में किया। इस ग्रंथ में अलग-अलग जातियों तथा धर्मों के सूफी, संतों, भक्तों की बाणी अंकित है जिससे मानवीय आचार उजागर होता है।'

प्रसिद्ध अंग्रेज़ विद्वान टायनबी कहते हैं- 'सिखों के लिए यह ईसाइयों के बाईबल, मुसलमानों के कुरान और यहूदियों के तौरान से भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। आने वाले समय में सिख धर्म और श्री गुरू ग्रंथ साहिब समूचे विश्व को एक विशेष महत्व की शिक्षा देंगे।' एच. एल. बर्नाडशाह जैसे प्रसिद्ध दार्शनिक का मत है— 'गुरू नानक देव जी के धार्मिक उपदेशों को इस नये युग का एक मात्र विश्वास समझना चाहिए। यह सभी दूसरे धर्मों द्वारा दिये गये सिद्धान्तों को समाप्त कर देता है। दूसरे ग्रंथ केवल सत्य का वर्णन करते हैं परंतु श्री गुरू ग्रंथ साहिब सम्पूर्ण

सत्य का वर्णन करते हैं। श्री गुरू ग्रंथ साहिब विश्व के एकमात्र ग्रंथ हैं जो यह बताते हैं कि इस भूमण्डल के अतिरिक्त अन्य भूमण्डल भी हैं। पहले के ग्रंथ यही बताते थे कि केवल यही एक संसार है, दूसरा नहीं। श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी आज के मनुष्य की समस्याओं का सच्चा समाधान हैं।' हिंदी के आचार्य श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है-'श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी समस्त मानवता के लिए एक दिव्य संदेश हैं। श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के संकलनकर्ता श्री गुरू अरजन देव जी महाराज ने बाणियों का संग्रह करते हुए किसी विशिष्ट भाषा का प्रयोग न कर, इन्हें भाषावाद से ऊपर रखा है।'

डॉ. रोशन लाल ने कहा—'श्री गुरू ग्रंथ साहिब का जितना आदर किया जाए उतना कम है। इसमें काव्य शास्त्र के अमूल्य जवाहरात हैं। भारतीय रहस्यवाद के उच्च स्तरीय उदाहरण इसमें से मिल सकते हैं। यह भाषा विज्ञान संबंधी खोज का एक विशाल खजाना है। संगीत कला की शास्त्रीय विधायें इसमें विद्यमान हैं। सदाचार तथा मानवता के द्रोहियों को द्रोही कहने की क्षमता है, ताकत है तथा निडरता है। यह ऐसे शीतल तथा मीठे जल का झरना है जो हमेशा बहता ही रहता है तथा जिसके सेवन से हजारों दुखी आत्माओं को शांति और शक्ति मिलती रहती है; जिसके आगे मस्तक झुकाने से आत्मिक प्रसन्नता तथा जिसके सुनने से आत्मिक शांति प्राप्त होती है। ऐसे अद्वितीय, महान और श्रेष्ठ ग्रंथ का सम्मान करना हमारा सभ्याचारक, साहित्यिक व नागरिक धर्म है।' अंग्रेज विद्वान मैक्स आर्थर मैकालिफ का कथन है—'श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का धर्म दूसरे धर्मों से बहुत भिन्न है। विश्व के बड़े-बड़े विद्वानों ने जो लिखा और कहा है उसमें उनका अपना कुछ भी नहीं है। उन्होंने परम्परा से चली आ रही सूक्तियों को केवल दोहराया है। हम सुकरात के विचारों को लेटो तथा जेनफिन की रचनाओं के माध्यम से ही जानते हैं। बुद्ध ने अपने उपदेशों को लिखित रूप में नहीं दिया है। कुंगफूजू जिसे यूरोपीय कानफीशियस के नाम से जानते हैं, ने भी ऐसा कोई ग्रंथ नहीं लिखा है जिसमें उसने अपने नैतिक और सामाजिक विचारों को व्यक्त किया हो। ईसाई धर्म के जन्मदाता ने अपने विचारों को लिखित रूप में नहीं दिया है। हमें उनके विषय में मैथ्यूमकिल्यूक और जान के लिखे गए ग्रंथों के माध्यम से मालूम होता है। अरब के मसीहा ने भी कुरान को लिखकर पेश नहीं किया। उन्हें उनके समर्थकों ने ही लिखा, परंतु सिख धर्म एक अकेला धर्म है जिसके गुरुओं की रचनाएं उन्होंने स्वयं संभालकर रखीं तथा श्री गुरू ग्रंथ साहिब के रूप में संकलित किया। इस तरह का मौलिक धर्म और विस्तृत नैतिक प्रणाली कहीं दूसरी जगह देखने को नहीं मिलती।' डॉ. मनमोहन सहगल ने गुरु ग्रंथ साहिब पर अपने विचार इस तरह व्यक्त किये हैं—'यद्यपि श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी का निर्माण लगभग ४०० वर्ष पूर्व हुआ है परंतु फिर भी वर्तमान जीवन की प्रचण्ड समस्याओं का सुचारू समाधान तथा भारतीय संस्कृति का आदर्श स्वरूप इसमें दृष्टिमान है। इसलिए श्री गुरू ग्रंथ साहिब को भावात्मक एकता, परस्पर प्रेम तथा मानवता का प्रचारक ग्रंथ मानते हैं। रूढ़िवादिता तथा संकीर्णता की निम्न कोटि की विचारधारा से मुक्त होकर जिस आदर्श समाज की संकल्पना श्री गुरू ग्रंथ साहिब में प्रस्तुत है, वह भारतीय संस्कृति का सारा दृष्टिकोण कही जा सकती है। भक्ति तथा शक्ति का गौरवपूर्ण मिश्रण श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट दिखाई देता है।' ■

प्रमुख सिख संस्थाओं का उद्भव और विकास

-डॉ. जसविंदर कौर*

श्री गुरू नानक देव जी द्वारा संस्थापित तथा उनके नौ उत्तराधिकारी गुरू साहिबान द्वारा संचारित किये गये सिख धर्म के विकास में सिख संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। सिख संस्थाओं ने सिख धर्म के मूल्यों को इंगित करते हुए उनको व्यवहारिक रूप में प्रस्तुत किया। इन संस्थाओं ने सिख पंथ को एकता के सूत्र में बांधने में सहायता की। यही कारण है कि सिख पंथ एकता के सूत्र में बंध कर एक संगठित समाज के रूप में स्थापित हो सका। संस्थाओं के कारण ही आरंभिक सिख समाज अनुशासन में रहा तथा आगे चल कर यह अपना विलक्षण अस्तित्व स्थापित करने में सफल हुआ। संस्थाओं ने सिख संस्कृति की सृजना में विशेष भूमिका निभाई। संस्थाओं के कारण ही सिख धर्म एक संगठित समाज के रूप में विकसित हो सका जबकि इसकी समकालीन कई और लहरें अपना अस्तित्व कायम रखने में असमर्थ रहीं। सिख धर्म के स्वरूप और विकास को समझने के लिये गुरू, शब्द, बाणी, संगत, पंगत, धर्मसाल, दान, दसवंध, अरदास, खालसा, अमृत, पांच प्यारे, खालसा पंथ, गुरमता आदि संस्थाओं के स्वरूप को समझना आवश्यक है। पर इनमें से प्रमुख संस्थाओं की चर्चा से पूर्व संस्था की अवधारणा के विषय में जानना आपेक्षित है।

वैबस्टर डिक्शनरी के अनुसार समाज या संस्कृति में 'संस्था' एक महत्वपूर्ण परंपरा, संबंध या संगठन है। यह किसी वस्तु या व्यक्ति का किसी स्थान या वस्तु से संबंध होता है। चैंबरस टवंटीअथ सेंचुरी डिक्शनरी में कहा गया है कि संस्था वह है जो बनाई जाती है या स्थपित की जाती है, जो अवधारणा है, जो सिद्धांत है, जो नींव है, स्थापित नियम है, सिद्धांतों की व्यवस्था या नियम हैं। संस्था एक विचारधारा को ढांचा बनाती है। संस्था एक ऐसा संगठन है जिसका विशेष महत्व होता है, जिसकी पूर्ति के लिये पहले व्यक्तिगत और फिर सामूहिक रूप में यत्न किये जाते हैं। इन कार्यों को आदत बनाया जाता है और फिर वे समय के साथ रूढ़ियों का रूप धारण कर लेती हैं जिन्हें तोड़ना अनुचित माना जाता है। इन रूढ़ियों की रक्षा के लिये एक ढांचा बनता है जिसके विशेष नियम होते हैं। इस प्रकार संस्था के निर्माण के लिये कई स्तर होते हैं, व्यवस्थायें और पद्धतियाँ होती हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि संस्था अपना पूर्ण व स्पष्ट रूप धारण करने से पहले कई पड़ावों में से होकर गुजरती है। इसका निर्माण किसी एक व्यक्ति से नहीं बल्कि पीढ़ियों के योगदान से होता है।

निस्संदेह सिख धर्म की संस्थायें भी कई पड़ावों मे से निकलीं पर इनके बीज हमें श्री गुरू नानक देव जी के काल में ही प्राप्त हो जाते हैं। श्री गुरू नानक देव जी ने प्रवृत्ति और निवृत्ति के मध्य एक संतुलित और आदर्श मार्ग को सबके समक्ष रखा जो मानव-कल्याण के सक्षम था। ऐसे धर्म की स्थापना के लिये

*प्रोफेसर, गुरू नानक अध्ययन विभाग, गुरू नानक देव यूनीवर्सिटी, श्री अमृतसर।

कुछ संस्थायें वांछित थीं।

गुरू-संस्था: गुरू को अज्ञान का अंधकार दूर कर ज्ञान का प्रकाश करने योग्य माना गया है। बाणी में गुरू को शीतलता प्रदान करने वाला, जहाज, सीढ़ी आदि माना गया है। इसका भाव यह है कि वह हमारे उत्थान में सहायक होता है। वह हमें सत्य के मार्ग पर चलने और प्रभु को प्राप्त करने में सहायता करता है। श्री गुरू नानक देव जी का धनासरी राग में कथन है:

सो गुरु करउ जि साचु द्रिड़ावै ॥
अकथु कथावै सबदि मिलावै ॥ *(पन्ना ६८६)*

श्री गुरू रामदास जी, गुरू और प्रभु में कोई भेद न मानते हुए फरमान करते हैं:

गुर गोविंदु गुोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई ॥
(पन्ना ४४२)

इसी अभिन्नता के कारण गुरू या सतिगुरू को प्रभु के पर्यायवाची के रूप में भी प्रयोग किया गया है:

हरि सिमरि एकंकारु साचा सभु जगतु जिंनि उपाइआ ॥ *(पन्ना १११३)*

परंतु बहुत सारे प्रसंगों में परमात्मा और गुरू के मध्य के भेद के स्पष्ट संकेत भी प्राप्त होते हैं:

त्रिभवणु खोजि ढंढोलिआ गुरमुखि खोजि निहालि ॥
सतगुरि मेलि मिलाइआ नानक सो प्रभु नालि ॥
(पन्ना २०)

यहां प्रकाश की वस्तु (प्रभु) तथा बिचोले (सतिगुरू) में प्रत्यक्ष अंतर है। गुरबाणी में गुरू प्रभु-रूप है पर प्रभु नहीं। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने तो यहां तक कह दिया है:

जो हम को परमेसर उचरिहैं ॥
ते सभ नरक कुंड महि परिहैं ॥ (बचित्र नाटक)

सिख मत में शब्द-गुरू के सिद्धांत पर विशेष बल है। श्री गुरू नानक देव जी की 'सिध गोसटि' नामक पावन बाणी में सिद्धों ने श्री गुरू नानक देव जो को प्रश्न किया-*'तेरा कवणु गुरू जिस का तू चेला ॥'* तो इसके उत्तर में श्री गुरू नानक देव जी ने फरमाया-*'सबदु गुरू सुरति धुनि चेला ॥'* श्री गुरू नानक देव जी के अनुसार शब्द प्रभु की श्रुति है। मनुष्य के ध्यान के लिये यही योग्य वस्तु है। शब्द पर ध्यान केंद्रित करने से तथा अपने जीवन को दैवी इच्छा के अनुसार पूर्ण रूप से ढाल लेने पर ही मन को वश में किया जा सकता है, मनमुखता को बाहर निकाला जा सकता है और प्रभु से समीपता प्राप्त की जा सकती है, फिर अंत में उसकी समरूपता में पूर्ण हुआ जा सकता है। श्री गुरू नानक देव जी के अनुसार शब्द-गुरू उपदेश है जो परमात्मा के सत्य का प्रगटावा है और मनुष्य को गुरू की ओर से दिया जाता है। 'गुरू' और 'शब्द', शब्दों का एक साथ प्रयोग भी बाणी में हुआ है और गुरू-शब्द से भाव गुरू की बाणी या शिक्षा है। गुरबाणी में बाणीकारों का आध्यात्मिक अनुभव शब्द रूप में संकलित है। गुरमति के अनुसार बाणी गुरू साहिबान द्वारा यत्न सहित रचित नहीं बल्कि उनके माध्यम से प्रभु-हुक्म ही प्रकट हुआ है। श्री गुरू नानक देव जी का कथन है:

हउ आपहु बोलि न जाणदा मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ ॥ *(पन्ना ७६३)*

इसी बात को और अधिक स्पष्ट करते हुए श्री गुरू रामदास जी का गउड़ी की वार में फरमान है:

सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु हरि करता आपि मुहहु कढाए ॥ *(पन्ना ३०८)*

यही कारण है कि बाणी और शब्द का सिख मत में विशेष स्थान है और कहा गया है-*'बाणी गुरू गुरू है बाणी. . ॥'* गुरमति में शब्द,

बाणी और गुरू में कोई अंतर नहीं माना गया। बाणी का पठन-पाठन गुरू का शब्द सुनने के समान है। बाणी में परमात्मा को शब्द रूप माना गया है और शब्द को गुरू रूप। यहां गुरू आध्यात्मिक और अशरीरी गुरू है।

श्री गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी गुरू साहिबान ने अपनी बाणी में गुरू-महिमा का उपरोक्त रूप कायम रखते हुए गुरू- महिमा उनके व्यक्तिगत रूप को लेकर भी गाई है और गुरू-शब्द का प्रयोग बाणी में सिख गुरू साहिबान के लिये भी हुआ है। यहां गुरू अशरीरी से शरीरी हो गया है और अव्यक्तिगत से व्यक्तिगत। कुछ विद्वानों का मत है कि प्रथम गुरू जी की बाणी में गुरू के संस्थागत रूप का अभाव है और सिर्फ गुरू के सिद्धांतगत का ही चित्रण है जबकि दूसरे गुरू साहिबान ने गुरू की सिद्धांतगत व्यवस्था के साथ-साथ संस्थागत व्यवस्था को भी महत्ता दी। परंतु इस विचारधारा को एक और दृष्टि से देखना होगा।

श्री गुरू नानक देव जी ने करतारपुर (अब पाकिस्तान) में धार्मिक केंद्र स्थापित किया। यहां अपने जीवन-काल में ही भाई लहणा जी को गुरू थाप कर आपने जब श्री गुरू अंगद देव जी के आगे माथा टेका तो गुरगद्दी की परंपरा प्रचलित हो गई। यहीं करतारपुर में गुरू नानक साहिब ने गुरू को संस्थागत रूप प्रदान किया। इस संस्था का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि गुरगद्दी का दायित्व दुनियावी विधान के अनुसार नहीं बनता था बल्कि दैवी विधान के अनुसार बनता था। गुरू की तरफ से गुरू का पद उस योग्य अधिकारी को प्रदान किया जाता था जिसमें गुरू बनने की योग्यताएं होती थीं।

इस तरह हम देखते हैं कि गुरू नानक-बाणी में जहां गुरू के संकल्प की चर्चा मिलती है या गुरू के मात्र सैद्धांतिक रूप का ही चित्रण प्राप्त होता है वहां श्री गुरू अंगद देव जी को गुरू स्थापित करने पर गुरू के संस्थागत रूप का भी आरंभ हो जाता है। सिख मत में दस गुरू साहिबान में एक आध्यात्मिक संबंध देखने को मिलता है। समूह गुरू साहिबान की 'नानक' नाम से रचित बाणी 'दस गुरू एक ज्योति' के सिद्धांत की प्रोढ़ता करती है। सिख मत में यह मान्यता है कि दस गुरू साहिबान शारीरिक रूप में चाहे भिन्न थे पर आध्यात्मिक तौर पर एक ही ज्योति, समूह गुरू साहिबान में विद्यमान थी। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में पावन फ़रमान है:

जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ ॥ *(पन्ना ९६६)*

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने जो ज्योति अकाल पुरख से श्री गुरू नानक देव जी द्वारा प्राप्त की थी उसे पांच प्यारों के माध्यम से पंथ में प्रवेश करवा दिया। इस प्रकार पंथ गुरू का विशेष रूप हो गया। इसी प्रसंग में कहा गया है-*'खालसा मेरो रूप है खास ॥'* श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने 'बाणी' को 'गुरुता' प्रदान करके सिखी को ऐसा सदीवी गुरू प्रदान किया जिससे यह संकट किसी भी अवस्था में पैदा नहीं हो सकता था कि विचारधारा में व्यर्थ का परिवर्तन हो सकता है।

इस प्रकार सिख मत में गुरू-संस्था का जो अंतिम रूप गुरू-ग्रंथ और गुरू-पंथ के रूप में प्रकट हुआ उसकी नींव रखने का श्रेय श्री गुरू नानक देव जी को जाता है जिन्होंने पहले दैवी अनुभव पर आधारित सैद्धांतिक पक्ष के रूप में अपनी बाणी में गुरू की अवधारणा प्रदान की और फिर क्रियात्मक रूप में श्री गुरू अंगद देव जी को स्वंय गुरुता सौंप कर धर्म के विकास के लिये गुरू-संस्था को अंकुरित किया। इसी के

परिणामस्वरूप सिख पंथ में गुरू-संस्था उभर कर सामने आई जिसने सिख पंथ को संगठित करने में अहम भूमिका निभाई।

संगत-संस्था: सिख मत के अनुसार संगत-संस्था उन व्यक्तियों का समूह है जो श्री गुरू ग्रंथ साहिब के समक्ष किसी उद्देश्य से एकत्र हुए हों। ऐसा समूह कीर्तन करता है, बाणी पर विचार-चर्चा करता है, धार्मिक क्रियाएं करता है और सामाजिक एवं राजनैतिक पक्षों से संबंधित विषयों पर चर्चा करता है। इसमें विभिन्न जातियों, व्यवसायों के व्यक्ति शामिल होते हैं।

संगत संस्था के इतिहास पर दृष्टि डालें तो पता चलता है कि इसका आरंभ श्री गुरू नानक देव जी के समय से ही हो गया था। श्री गुरू नानक देव जी की चार उदासियों (यात्राएं) के समय ही बहुत सारे लोग उनकी विचारधारा से प्रभावित होकर उनके अनुयाई बन गये जो संगत के रूप में एकत्र होकर बाणी का उच्चारण करते थे। श्री गुरू नानक देव जी द्वारा स्थापित धार्मिक केंद्र करतारपुर में भी संगतें गुरू जी के प्रवचनों से लाभान्वित होती थीं। भाई गुरदास जी ने वारों में करतारपुर के संबंध में चर्चा करते हुए कहा है:

धरमसाल करतार पुरु साधसंगति सच खंडु वसाइआ। *(वार २४:१)*

करतारपुर में रहने वाली संगत गुरू जी के उपदेशों के अनुसार अपना जीवन-यापन करती थी। करतारपुर में संगतें रसोई, सफाई, बरतन साफ करने, आये श्रद्धालुओं की सेवा करती थीं, जो क्रम बाद में भी चालू रहा। करतारपुर के अतिरिक्त और स्थानों पर भी संगतों का निर्माण हो चुका था। ये संगतें नाम के जाप के साथ लंगर आदि को भी विशेष महत्व देती थीं। श्री गुरू अंगद देव जी ने एक नया केंद्र खडूर साहिब स्थापित किया। श्री गुरू अमरदास जी ने संगतों को गुरू के साथ जोड़ने के लिये मंजी-प्रथा का आरंभ किया और इनका कार्य श्रद्धालु सिखों को सौंपा जिनका कार्य गुरबाणी की व्याख्या करना तथा संगतों को गुरू साहिब से मिलवाना था। वैसाखी के दिन समूह संगतें गुरू जी के दर्शन हेतु आती थीं और उन्हें भेंट प्रदान करती थीं।

श्री गुरू रामदास जी ने **'संगत-संस्था'** को सुव्यवस्थित करने के लिये **'मसंद-संस्था'** का आरंभ किया तथा आदेश दिया कि प्रत्येक सिख अपनी मेहनत से की गई कमाई में से दसवां भाग (दसवंध) निकाल कर, धार्मिक और सामाजिक कार्यों के लिये अपने क्षेत्र के मसंद को दे। श्री गुरू अरजन देव जी के समय तक संगतों को संगठित करने का कार्य मसंदों के पास ही रहा। श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी ने कुछ मसंदों के भ्रष्टाचारी हो जाने के कारण सिख धर्म में शामिल होने के लिये **'चरण पाहुल'** का आरंभ किया, जिसके अनुसार कोई भी पांच योग्य श्रद्धालु अपने चरण-अमृत द्वारा सिख सजा सकते थे। प्रचारकों की यह नई श्रेणी **'धूणों'** के नाम से जानी जाने लगी। श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब के समय तक डल्ला, सुलतानपुर, लाहौर, काबुल, कश्मीर, थानेश्वर, दिल्ली, फतेहपुर, आगरा, ढाका, ग्वालियर, जौनपुर, पटना, राजमहिल आदि तक स्थापित हो चुकी थीं।

श्री गुरू हरिराय साहिब ने प्रचारक संगठन **'बख्शिशों'** का निर्माण किया तथा श्रद्धालु एवं विनम्र सिखों को यह पदवियां प्रदान कीं। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने १६९९ ई में खालसे की सृजना करके सिख धर्म की आरंभ से चली आ रही **'संगत-प्रथा'** को किसी भेदभाव रहित सामूहिक भाईचारे की विशेषता वाले खालसा पंथ

में परिणित कर दिया। पांच प्यारों का खालसा सृजना में अहम योगदान है जिनके चुनाव में किसी वर्ग, जाति, क्षेत्र आदि को प्रधानता नहीं दी गई। पांच प्यारों को अमृत-पान करवा कर फिर श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने उनसे अमृत-पान किया तथा संगत या खालसे को गुरू की पदवी प्रदान करते हुए फरमाया:

खालसा मेरो रूप है खास ॥
खालसे मै हउ करउ निवास ॥

(श्री सरबलोह ग्रंथ, पन्ना ६६७)

लंगर-संस्था: सिख धर्म के सिद्धांतों को व्यवहारिक रूप प्रदान करने तथा इसे संगठित बनाये रखने में लंगर या पंगत संस्था का अहम योगदान है। सिख स्रोतों के अनुसार श्री गुरू नानक देव जी के समय ही लंगर-संस्था का आरंभ हो गया था। श्री गुरू नानक देव जी द्वारा स्थापित धार्मिक केंद्र करतारपुर में भी संगतें सामूहिक रूप में लंगर ग्रहण करती थीं। श्री गुरू अंगद देव जी ने खडूर साहिब में इस संस्था को और प्रफुल्लित किया। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में भी इस बात के संकेत मिलते हैं कि श्री गुरू अंगद देव जी के समय लंगर की सेवा उनके महिल (सुपत्नी) माता खीवी जी की देख-रेख में होती थी। श्री गुरू अमरदास जी के समय में लंगर सिख धर्म की एक महत्वपूर्ण संस्था बन गया। उन्होंने *'पहले पंगत पाछै संगत'* का नियम स्थापित किया। सिख परंपरा के अनुसार सम्राट अकबर ने भी गुरू-घर में लंगर ग्रहण किया था। मंजीदारों ने अपने-अपने क्षेत्रों में धर्मसालें स्थापित कीं जहां लंगर की व्यवस्था भी होती थी। श्री गुरू रामदास जी के समय लंगर-संस्था के साथ आध्यात्मिकता की भावना भी जुड़ गई।

श्री गुरू अरजन देव जी के समय सिख पंथ का प्रसार सम्पूर्ण भारत में हो चुका था। उन्होंने दसवंध की परंपरा चलाई। इस दसवंध से धर्मसालाओं में लंगर चलाए जाते थे। श्री गुरू अरजन देव जी के समय लंगर की सेवा को दैवी-सेवा के तुल्य समझा जाता था। श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब के सिख भी लंगर के प्रति सेवाओं को पूर्णत: समर्पित थे। गुरू साहिब ने नानकमते को योगियों से स्वतंत्र कराकर बाबा अलमस्त को लंगर की सेवा की जिम्मेवारी सौंपी। सिख इतिहास के स्रोतों में यह जानकारी भी मिलती है कि भाई गड़िए, भाई रूपचंद को लंगर की सेवा तन, मन, धन से करने के लिए गुरू जी ने उन्हें सराहा। बीबी वीरो की शादी के लिये तैयार किये मिष्ठान काबुल की संगत में वितरण कर देना श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब के लंगर के प्रति प्रेम को प्रकट करता है।

श्री गुरू हरिराय साहिब जी ने लंगर चलाने को सबसे अधिक कल्याणकारी माना। श्री सरूप दास भल्ला के अनुसार, 'उनके समय में सिख संगतों ने नगर-नगर में लंगर स्थापित कर दिये जिससे गुरू-महिमा के प्रसार में वृद्धि हुई। श्री गुरू तेग बहादर जी के समय में भाई गड़िया जी की निगरानी में बाबा बकाला में लंगर की सेवा की जाती थी। पंजाब ही नहीं पूर्वी भारत में भी लंगर के लिये संगतों में बहुत उत्साह था। पटना निवासी भाई जैता सेठ जी लंगर की सेवा के लिये समर्पित थे। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के समय संगतों के लिये आनंदपुर साहिब में एक से अधिक लंगर चलाए जाते थे। लंगर की व्यवस्था में गुरू जी स्वयं रुचि लेते थे। खालसे की सृजना के उपरांत भी लंगर संस्था निर्विघ्न खालसे की रहित सर्यादा का अंग बनी रही। माता सुंदरी जी और माता साहिब कौर जी के हुक्मनामों में भी सिखों को लंगर के लिये भेंट के आदेश प्राप्त होते हैं जो

इस संस्था को चलाए रखने की रुचि के प्रमाण हैं। १८वीं सदी के रहितनामे *'गरीब का मुंह, गुरू की गोलक'* कहते हैं। रहितनामा साहित्य में लंगर के लिये खाना तैयार करते समय सफाई और पवित्रता का ध्यान रखना चाहिये। लंगर की सेवा प्रेम-भाव से की जानी चाहिये, ऐसे संदर्भ भी सिख साहित्य में प्राप्त होते हैं। इस प्रकार यह पता चलता है कि लंगर-संस्था चाहे संगत की आवश्यकता की पूर्ति भी करती थी परंतु इसकी स्थापना के काल से ही इसका संस्थागत रूप भी कायम हो गया था। यह संस्था शीघ्र ही सिख धर्म का अभिन्न अंग बन गयी। इस संस्था ने जात-पात एवं ऊँचे-नीचे वर्ग के भेदभाव को मिटाने में बहुत अहम भूमिका निभाई। बिना भेदभाव के सब लोग एक साथ बैठ कर लंगर ग्रहण करते थे, एक ही रसोई का बना भोजन लेते थे जिसने भ्रातत्व-भावना को बनाने में सहायता की।

धर्मसाल: 'धर्मसाल' शब्द के कोशगत अर्थ हैं वह स्थान जहां धर्म की क्रिया हो या धर्म कमाने का स्थान। यह वह स्थान है जहां यात्रियों को नि:शुल्क निवास दिया जाता है। वहां अतिथियों को निवास तथा अन्न और विद्यार्थियों को धार्मिक पोथियों द्वारा धार्मिक शिक्षा भी दी जाती है। यहां धर्म-अधर्म पर विचार-चर्चा, नाम-जाप, कीर्तन आदि भी किये जाते हैं। धर्मसाल में सेवा-भावना से कार्य होता है, इसकी चर्चा श्री गरू ग्रंथ साहिब में भी है। गुरू साहिब ने इस संदर्भ में कहा है:

मै बधी सचु धरम साल है ॥
गुरसिखा लहदा भालि कै ॥
पैर धोवा पखा फेरदा तिसु निवि निवि लगा पाइ जीउ ॥ (पन्ना ७३)

श्री गुरू अरजन देव जी ने धर्मसाल को परम पिता परमात्मा के दरबार का द्वार वर्णित करते हुए कहा है कि यहां धर्मी मनुष्य प्रभु के यश का गायन करते हैं:

मोहन तेरे ऊचे मंदर महल अपारा ॥
मोहन तेरे सोहनि दुआर जीउ संत धरम साला ॥
धरम साल अपार दैआर ठाकुर सदा कीरतनु गावहे ॥
जह साध संत इकत्र होवहि तहा तुझहि धिआवहे ॥
(पन्ना २४८)

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में यह भी चर्चा है कि धर्मसाल में धर्मी पुरुषों के साथ मिलकर, अमृत-नाम का खजाना प्राप्त करके, प्रभु के यश का गायन तथा श्रवण किया जाता है:

हउ मागउ तुझै दइआल करि दासा गोलिआ ॥
नउ निधि पाई राजु जीवा बोलिआ ॥
अंम्रित नामु निधानु दासा घरि घणा ॥
तिन कै संगि निहालु स्रवणी जसु सुणा ॥
कमावा तिन की कार सरीरु पवितु होइ ॥
पखा पाणी पीसि बिगसा पैर धोइ ॥
आपहु कछू न होइ प्रभ नदरि निहालीऐ ॥
मोहि निरगुण दिचै थाउ संत धरम सालीऐ ॥
(पन्ना ५१८)

भाई गुरदास जी अपनी वारों में 'धर्मसाल' को 'मानसरोवर' कहते हैं जहां से गुरू-शब्द रत्न प्राप्त होते हैं:

धरमसाल है मानसरु हंस गुरसिख वाहु।
रतन पदारथ गुर सबदु करि कीरतनु खाहु ॥
(वार ९:१४)

भाई गुरदास जी की वारों में चर्चा है कि जहां-जहां भी गुरू साहिबान गये वहीं सिख संगतें स्थापित हुईं, वहीं-वहीं धर्मसाल स्थापित होती गईं। वे स्थान पूज्य बन गये। धर्मसाल का मुखिया संगत का मुखी होता था।

श्री गुरू नानक देव जी ने अपने जीवन

काल में ही करतारपुर में धर्मसाल की स्थापना की जहां संगत एकत्र होकर आध्यात्मिक वातावरण की सृजना करती थी। गुरू साहिब यहां संगत को उपदेश देते थे तथा आई संगत को लंगर और आवश्यक सुविधायें प्राप्त होती थीं। खडूर साहिब, गोइंदवाल साहिब तथा श्री अमृतसर में भी गुरू साहिबान ने धर्मसालाओं की स्थापना की। यहां सिखों द्वारा अतिथियों की सेवा, यात्रियों के लिये विश्रामस्थल, आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के लिये गुरमति-विद्या, नाम-साधना, बाणी के पाठ आदि की सुविधाएं उपलब्ध होती थीं। सिख, गुरू साहिब के गुरुपर्व आदि भी यहीं मनाते थे। दीवाली आदि त्यौहारों पर भी संगतें यहीं एकत्र होती थीं। भाई गुरदास जी धर्मसाल की महत्ता को स्वीकारते हुए सहजपुरी और सर्वोत्तम कहते हैं:

सते पुरीआ सोधीआ सहज पुरी सची धरमसाला।
(वार २९:८)

निर्मल गुरमति सिद्धांतों के अनुरूप हमें धर्मसालाओं को आध्यात्मिकता के विकास का स्थान ही बनाये रखने हेतु सभी संभव प्रयास करने चाहिएं। ■

नूर कहाँ से आया ?

*-इंजी. कर्मजीत सिंघ नूर**

एक बालक दोस्त के घर से, दीप जला कर लाया।
राह में एक बुजुर्ग ने उसको, अपने पास बुलाया।
उसके सर पर हाथ फेर कर, बड़े प्यार से बोला,
'बेटा! जरा बताओगे, यह नूर कहाँ से आया?'
बालक था मासूम व भोला, लेकिन था मखमूर।
हरदम किसी अजीब रंग में, रहता था मसरूर।
फूंक मार कर उस बालक ने, झट वो दीप बुझाया।
'बोला, बाबा आप बताएं, कहाँ गया वो नूर?'
बाबा सुन कर सुन्न हो गया, सुध-बुध बिसरायी।
मैंने इसी ज्ञान की खातिर, सारी उम्र गंवाई।
बालक के चरणों में, अपना सीस झुका कर बोला,
'तेरी बात से आज मुझे, यह बात समझ में आयी।
सभी रूप उस रूप से आए, जिसका रूप न कोई।
सारा नूर महां-सूरज का, छाँव-धूप न कोई।
सारे रंग उसी कादिर की, कुदरत ने बिखराए,
सभी स्रूप उसी के हैं, जिसका स्वरूप न कोई।
इन किरणों के पीछे है, इक सूरज सोन सुनहरा।
इन लहरों के पीछे है, इक महाँ समुद्र गहरा।
हर ज्ञान के पीछे है, इक महाँ-ज्ञान की शक्ति,
कुल सृष्टि के ऊपर है, उस शक्ति का पहरा।'
वोह बुजुर्ग कौन था बोलूं, है जिसकी यह बात?
सत्यवादी शहीद नाम था, दार्शनिक 'सुकरात'। ■

**३/६१, गार्डन कालोनी, जालंधर। मो: ०९८१५०२३९७०*

आतम महि रामु राम महि आतमु

*-डॉ. नरेश**

आत्मा और परमात्मा क्योंकि समान रूप से अदृश्य वायबी हैं और आत्मा क्योंकि ब्रह्म-ऊर्जा का एक अंश ही है, इसलिए आत्मा की पहचान होते ही परम-आत्मा की पहचान का रास्ता प्रशस्त हो जाता है। जिस प्रकार आत्मा रूपी लघु अदृश्य तत्त्व के शरीर में रहने से ही शरीर चलता है, पैदा होता है, बड़ा होता है, हँसता-खेलता है, क्रोध करता है, डराता-धमकाता है, सुख-ऐश्वर्य भोगता है, उसी तरह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड परम-आत्मा की विद्यमानता के कारण गतिशील है। जिस प्रकार आत्मा के भिन्न होते ही शरीर का अवसान अवश्यंभावी है, उसी प्रकार परमात्मा के भिन्न होते ही ब्रह्माण्ड का अस्तित्वहीन होना भी अनिवार्य है।

प्रकृति का अटल नियम है कि हर चीज अपने मूल की ओर लौटना चाहती है, फिर से वही बनना चाहती है, जो थी। पानी का मूल धरती के नीचे है, इसलिए पानी को कहीं भी गिराया जाए, वह नीचे की ओर बहेगा। जहां जगह तनिक सी भी नीची होगी, उधर को ही दौड़ पड़ेगा। गर्मी या तेज का मूल सूर्य है, ऊपर है। आग कहीं भी जलाई जाए, ऊपर की ओर ही जाएगी। जितना अधिक ईंधन मिलेगा, उतनी ही अधिक ऊर्ध्वमुख होती जाएगी। जैसे-जैसे सर्दी का प्रकोप मानव-शरीर पर होता है, वह अपने में मुड़ता-तुड़ता रहता है और अन्तत: वह रूप धारण कर लेता है जो रूप उसे माँ के गर्भ में प्राप्त था। दुख या विषाद के क्षणों में भी मानव-शरीर इसी अवस्था को लौट पड़ता है। लोग घुटनों में सिर देकर बैठ जाते हैं। वह लौटता है अपने मूल की ओर, जो था उसकी ओर। आत्मा का मूल परमात्मा है, इसलिए आत्मा लालायित रहती है परमात्मा से मिलने के लिए, उसके पास लौटकर अपने मूल को प्राप्त होने के लिए। लेकिन शरीर रूपी पिंजरे में कैद यह आत्मा रूपी पक्षी अपने पंख फड़फड़ा कर रह जाता है। माया के मोह में ग्रसित शरीर उसकी फड़फड़ाहट पर व्याकुल नहीं होता अपितु उसे बहला-फुसलाकर उसकी व्यग्रता समाप्त करने में लग जाता है। साधारण व्यक्ति यही तो करता है दिन-रात। उसे ब्रह्म की याद में रोने से बचाने के लिए बार-बार माया में उलझाता है।

जो लोग आत्मा को बहला-फुसलाकर माया में उलझाने के स्थान पर उसके रुदन को सुनते हैं, वे साधारण व्यक्तियों से भिन्न होते हैं। ऐसे व्यक्तियों को 'प्रबुद्ध' कहते हैं। प्रबुद्ध व्यक्ति आत्मा को फुसलाने के स्थान पर उसकी मुक्ति का मार्ग खोजता है, उन साधनों की तलाश करता है, जिनके द्वारा आत्मा अपने मूल तत्त्व अर्थात् परमात्मा से मिल सके।

ब्रह्म को उसके रूप या आकार के माध्यम से, विशेषकर उस रूप या आकार के माध्यम से जो मानव की कल्पना-शक्ति ने अपने भौगोलिक-सामाजिक परिवेष के प्रभावाधीन दे रखा है। देखने का प्रयास बुनियादी तौर पर

*१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९

रेत की दीवार खड़ी करने के समान है। उसे खोजने के लिए कहीं बाहर जाने की आवश्यकता नहीं, अपने अंदर उतरने की आवश्यकता है, क्योंकि हमारे अंदर उसका स्वरूप, उसका अंश, उसका प्रतिरूप मौजूद है। यही एकमात्र सूत्र है, जिसे पकड़कर हम उस तक पहुँच सकते हैं।

यह शरीर तो प्रकृति के पंच महाभूतों से विनिर्मित माटी का खिलौना मात्र है। प्रभु के दिव्य अंश का सुंदर कारावास है। इसका ब्रह्म तक पहुँच पाना, इसका अपने स्थूल मांसल नेत्रों से ब्रह्म को देख पाना संभव नहीं है। दिव्य तत्त्व को दिव्य तत्त्व ही देख सकता है। दिव्य तत्त्व में दिव्य तत्त्व ही विलिन हो सकता है, अन्य कुछ नहीं। शरीर को महत्त्व देना कैदी के स्थान पर कारावास की इमारत को महत्त्व देना है।

आवश्यक यह जान लेना है कि ब्रह्म ऊर्जा रूप है, इसलिए वह अदृश्य है, निराकार है, निरंजन है। ऊर्जा को हम अपनी अन्तर्दृष्टि द्वारा ही देख सकते हैं, बाध्य नेत्रों द्वारा नहीं। यह ऊर्जा रूप भी उसी अवस्था में अन्तर्दृष्टि की पकड़ में आता है, जब अन्तर्दृष्टि पूर्णतया अभयस्त होकर, ऊर्जा को प्रकाश-रूप में, ज्योति-रूप में देखने के योग्य हो जाती है। ज्योति-रूप का दर्शन भी ज्योति में परिवर्तित हुई आत्म-ऊर्जा ही कर सकती है। यहां पहुंचकर ही समझ आता है कि गुरू नानक साहिब के *जाति महि जोति जोति महि जाता* का क्या अर्थ है।

ब्रह्म यद्यपि अदृश्य है लेकिन उसे देख पाना असम्भव नहीं है, कठिन भी नहीं है। मिर्जा गालिब कहते हैं:

मिलना तेरा अगर नहीं आसाँ तो सहल है,
दुश्वार तो यही है कि दुश्वार भी नहीं।

क्योंकि सरल काम में श्रम-साधना बहुत कम होती है, इसलिए उसका महत्त्व भी न्यून हो जाता है। गला खराब होने पर हर डॉक्टर नमक के पानी के गरारे करने को कहता है, जो कोई नहीं करता। दवाई कितनी भी महँगी क्यों न हो, सब खा लेते हैं। नमक घर में पड़ा है, खरीदना नहीं है, इसलिए नमक का महत्त्व भी नहीं है। दवा खरीदनी है, इसलिए महत्त्वपूर्ण है। ■

आपका पत्र मिला

गुरमति के ज्ञान का भंडार है इसमें

मुझे सागर शहर (मध्य प्रदेश) भ्रमण के दौरान गुजराती बाजार में यह पत्रिका पढ़ने को मिली। पढ़कर अत्यंत खुशी हुई। गुरमति के ज्ञान का भण्डार है इसमें। यह पत्रिका दूरस्थ ग्रामीण अंचलों तक पहुंचनी चाहिये। साथ ही पांच प्यारों एवं बंजारा समाज के लक्खीशाह, मक्खन शाह एवं भाई मनी सिंघ जी के वंशज तक इसका पहुंचना आवश्यक है। यह सोये हुये वर्ग में ऊर्जा बनेगी, सोते हुये लोगों के अन्तरमन पर पड़े अंधकार को मिटाकर उजाला लाएगी एवं गुरमति के ज्ञान से उनके हृदय पवित्र होंगे।

-हरदीप सिंघ, पन्ना (म. प्र.)

शान की पहचान पगड़ी

*-स. सुरजीत सिंघ**

सिर ढकने की भावना के मद्देनजर सिर पर बांधा गया कोई सा भी कपड़ा सम्मान और श्रद्धा का सूचकांक है, क्योंकि प्राचीन शास्त्रों में लिखा हुआ है-"अशुभंनम्नाशिर" अर्थात नंगे सिर रहना अशुभ होता है। आदि काल से ही यह परम्परा रही है कि नंगे सिर न रहकर पुरुष सिर पर पगड़ी बांधते थे अथवा टोपी रखते थे अथवा साफा बांधते थे। इसी प्रकार स्त्रियां चुन्नी अथवा साड़ी से सिर ढकती थीं जो आज भी सुसंस्कृति का प्रतीक एवं श्रेयस्कर माना जाता है। यह वर्णनयोग्य है कि जब कोई व्यक्ति किसी धर्म-स्थल, गुरुद्वारा, मंदिर अथवा मस्जिद जाता है तो वह सिर पर कपड़ा बांधकर, सिर ढककर ही ईश्वर के सम्मुख हाजिर हो अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करता है क्योंकि इससे लोक-धर्म और सत्य-धर्म का पालन होता है। मनुष्य के शीश से ही शरीर और आत्मा की तार जुड़ी हुई है क्योंकि यह शरीर का अत्यन्त महत्वपूर्ण, नाजुक एवं सेन्सटिव भाग होता है। यह प्रमाणित सत्य है कि सिर एक प्रकार से शरीर को नियन्त्रण करने वाला ब्रह्माण्ड स्वरूप ही है जिसमें मस्तिष्क, बुद्धि और ज्ञानेन्द्रियों का जाल सा बिछा हुआ है। शीश के सुरक्षा कवच के रूप में ही ईश्वर ने सिर पर केश (बाल) पैदा किए हैं जो सर्दी-गर्मी, बारिश, प्रदूषण अथवा किसी अनहोनी घटना से सिर को हर समय, हर पल बचाये रखते हैं। सिर ढकने की प्रक्रिया मानव के ज्ञान-विज्ञान के जिज्ञासु होने की पहचान को रेखांकित करते हुए ईश्वर के प्रति सच्ची श्रद्धा और सम्मान की भावना का प्रतीक है। चाहे ब्याह-शादी हो, पाठ-पूजा हो, किसी धर्म-स्थल के दर्शन करने हों अथवा अन्य कोई आयोजन हो, उस समय भी सिर को पगड़ी, टोपी अथवा किसी अन्य कपड़े से ढकने का ही सर्वत्र परामर्श दिया जाता है। सिर ढकने की भावना से मनुष्य के अन्दर व्याप्त अहंकार का विनाश होकर प्रेम, श्रद्धा और गौरव का उद्गम होने लगता है जिससे *कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा-तेरा तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा* को चरितार्थ करते हुए प्रभु के प्रति आस्था और विश्वास के भाव पल्लवित और पुष्पित होते हैं। इस भावना से उत्पन्न विनम्रता से प्रेम का संचार होता है। देश के लगभग हर समुदाय एवं क्षेत्र में पगड़ी पहनने का रिवाज प्रचलित है और वह भी खास अवसरों पर तो इसे आन-बान-शान की बात समझी जाती है।

'पगड़ी' शब्द का जन्म कुछ विद्वान 'पगरी' से मानते हैं क्योंकि सिर पर बांधा जाने वाला साफा प्राचीन समय पैरों तक झूला करता था इसलिए इसे 'पगरी' कहा गया जो बाद में 'पगड़ी' हो गया। कुछ विद्वान पगड़ी शब्द की उत्पत्ति 'पट्टम्' से हुई मानते हैं अर्थात 'पट्टम' शब्द का तात्पर्य सिर पर बांधने वाले 'पटका' से है जो बाद में परिवर्तित हो हिन्दी-पंजाबी में 'पगड़ी' शब्द कहलाने लग गया। भाषा विज्ञान के

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

**५७-बी, न्यू कॉलोनी, गुमानपुरा, कोटा (राज.)*

दसतार की विश्व परंपरा तथा सिख दसतार

*–स. गुरदीप सिंघ**

दसतार की प्रभुता बहुत महान और पुरातन है। मनुष्य के पहरावे का कोई भी वस्त्र दसतार जितनी धार्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक महत्ता नहीं रखता। दसतार सिर का बचाव करती है और चेहरे को सुंदरता प्रदान करती है। दसतार, पग, पगड़ी को अंग्रेजी में टरबन, फ्रैन्च में टलबैन्ड, इतालवी, सपेनी और पुर्तगाली में टरबैन्टो, डच में टलबनज, रोमानी में टुलीपन, लतीनी में माईटर तथा तुर्की में सरीक कहा जाता है। दसतार किसी न किसी रूप, नाम और काल में ईसाइयों, यहूदियों, मुसलमानों तथा सिखों के सिर का श्रृंगार रही है और आज भी है।

ईसाई धर्म की धार्मिक पुस्तक 'बाईबल' में पगड़ी बांधने का जिक्र कई बार आया है जिससे यह जाहिर होता है कि हज़रत ईसा मसीह से १३०० वर्ष पहले भी यहूदी और इज़राइली 'पगड़ी' सजाते थे। बाईबल के अनुसार पगड़ी यहूदी पादरियों की पोशाक का एक अहम हिस्सा थी।

इस्लाम धर्म में 'पग' को और भी अहमियत दी गई है। पैगम्बर मोहम्मद साहिब का भी पगड़ी बांधने के बारे में कई हदीसों में जिक्र है। कुछ हदीसों के अनुसार पैगम्बर मोहम्मद साहिब ने खुद यह फरमान जारी किया था कि मुसलमान पगड़ी बांधे। उन्होंने कहा था कि उनके फरिश्ते भी पगड़ी बांधा करते थे।

पूर्णता का लक्षण : 'दसतार' फारसी शब्द है जिसका अर्थ है हाथों से सजा-संवार कर बांधा गया वस्त्र। जिस व्यक्ति ने अरबी तालीम की योग्यता पा ली हो और चिन्ह के रूप में दसतार बांध ली हो उसको दस्तारबंद कहा जाता था। अत: दसतारबंदी एक पूर्णता का लक्षण है।

दसतारचा : छोटी पगड़ी को दसतारचा कहा जाता है जिसको खालसाई शब्दों में 'केसकी' कहा जाता है।

आदर-सम्मान का प्रतीक : जब तुर्की सुल्तानों ने दिल्ली पर कब्जा कर लिया तो ये लोग यह बर्दाश्त न कर सके कि गुलाम हिन्दोस्तानी सिर पर दसतार सजा कर रखें। इन्होंने यह चाल चला दी कि गुलाम लोगों को पगड़ी की जगह छोटी टोपी पहना दी जाए। इस प्रकार धीरे-धीरे हिन्दोस्तानियों की दसतार उतरवा ली गई और इसकी जगह टोपी पहना कर सदा के लिए गुलाम बना दिया गया। पगड़ी केवल सिर का लिबास ही नहीं आदर-सम्मान का भी जाना-माना प्रतीक है। मुगलों के समय में किसी अमीर वजीर का सम्मान करने के लिए उसे शाही दरबार की तरफ से जोड़ा-जामा दिया जाता था और दसतार भी बांधी जाती थी जिसे सिरोपा कहते थे। पैरों में पगड़ी रखने को माफी मांगने का एहसास माना जाता है।

जब मुसलमान लोग हज पर जाते हैं तो पगड़ी बांध कर जाना अच्छा समझते हैं। हिन्दू भी पगड़ी को अच्छा समझ कर बांधते रहे हैं। जब कभी भी हिन्दू परिवार में शादी होती है तो वर के सिर पर पगड़ी जरूरी समझी जाती

**३०२, किदवाई नगर, लुधियाना। मो: ९८८८१२६६९०*

है। इस शुभ अवसर पर मुख्य रिश्तेदार भी पगड़ी बांधना जरूरी समझते हैं। हिन्दू धर्म में पिता के मरने के बाद पगड़ी की रस्म की जाती है और यह घर के बड़े पुत्र को बंधाई जाती है। राजस्थानी राजपूत भी पगड़ी को अपनी शान मानते हैं।

सिख इतिहास में जिक्र आता है कि श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी के समय में जब नत्था मल और अब्दुल्ला ढाढी ने गुरू साहिब के संबंध में जो वार लिखी उसमें गुरू जी की दसतार का जिक्र है:

दो तलवारां बधीआं इक मीर दी इक पीर दी।
इक अजमत दी इक राज दी इक राखी करे वजीर दी। . . .
पग्ग तेरी, की जहांगीर दी?

श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब जी की पगड़ी बादशाह की पगड़ी से क्यों अच्छी थी इसके दो कारण हैं—पहला यह कि सतिगुरू जी सदीवी श्री अकाल तख्त साहिब के अस्तित्व के रखवाले थे और अनगिनत श्रद्धालु उनको सच्चा पातशाह मानते थे और उनको आदर सहित बैठाकर समय के बादशाह से कहीं अधिक सम्मान देते थे। दूसरा यह कि गुरू जी की दसतार, बादशाह की दसतार की तरह किसी की बंधी हुई ही सिर पर नहीं रखी होती थी बल्कि सतिगुरू जी स्वयं अपने हाथों से आप ही सजाते थे।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में दसतार का जिक्र इस प्रकार मिलता है:

काइआ किरदार अउरत यकीना ॥
रंग तमासे माणि हकीना ॥
नापाक पाकु करि हदूरि हदीसा साबत सूरति दसतार सिरा ॥ (पन्ना १०८४)

परमात्मा की उसतति में भक्त नामदेव जी इस प्रकार कहते हैं:

खूबु तेरी पगरी मीठे तेरे बोल ॥ (पन्ना ७२७)

भक्त रविदास जी फरमाते हैं:

बंके बाल पाग सिरि डेरी ॥ (पन्ना ६५९)

बाबा फरीद जी के श्लोकों में पग का हवाला इस प्रकार दिया गया है:

फरीदा मै भोलावा पग दा मतु मैली होइ जाइ ॥
गहिला रूहु न जाणई सिरु भी मिटी खाइ ॥ (पन्ना १३७९)

बेशक मुसलमानों में पगड़ी बांधना स्वयं पैगम्बर की तरफ से कहा गया था। हज़रत मुहम्मद साहिब जी खुद भी पगड़ी बांधते थे पर पगड़ी बांधना आवश्यक कभी नहीं बना। सिख धर्म में कुदरत की तरफ से बख्शे 'केशों' को हमेशा साबत सूरत में रखने के हुक्म ने सिखों को 'दसतार सिरा' बांधना जरूरी बना दिया। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी से पहले भी सारे सिख-गुरू दसतार सजाते थे और केश रखते थे पर ३० मार्च १६९९ को जारी किए गए फरमान के अनुसार केश और दसतार को सिखी स्वरूप का अभिन्न अंग बना दिया गया।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी पाऊंटा साहिब (हिमाचल प्रदेश) में दसतारबंदी के मुकाबले करवाया करते थे। इस पावन स्थान का नाम 'गुरुद्वारा दसतार स्थान' है।

सारे संसार में दसतार सजाने वाले को 'सरदार जी' कह कर सत्कार सहित बुलाया जाता है।

रहितनामा के अनुसार सिख को दसतार सजाने का हुक्म है। भाई नंदलाल जी ने लिखा है:

कंघा दोनउ वकत कर, पाग चुनहि कर बांधई।

रहितनामा भाई प्रहलाद सिंघ जी के अनुसार:

पाग उतार प्रसाद जो खावे। सो सिख कुंभी नरक सिधावे।

रहितनामा भाई चउपा सिंघ जी के अनुसार : *जो पाग नूं बासी रखे सो तनखाईआ।*

गुरसिख मैली-कुचैली दसतार न सजावे, साफ धुली हुई दसतार सजाए, एक ही दसतार को ज्यादा समय तक बांधकर न रखे।

सिख को गुरू साहिबान की तरफ से हटाई गई गुलामी की निशानी टोपी नहीं पहननी चाहिए। रहितनामा भाई चउपा सिंघ जी के अनुसार:

जो केसाधारी टोपी में सो भी तनखाईआ।

टोपी पहनने वाले के पांव नहीं पड़ना चाहिए, न ही टोपी वाले का जूठा खाना चाहिए:

टोपी वाले दे केसाधारी पैरी पवै सो तनखाईआ।
टोपी वाले का झूठा खावै सो तनखाईआ।
(रहितनामा भाई प्रहलाद सिंघ जी)

पुराने समय में नंगा सिर रखना बुरा माना जाता था। हमारे देश में सिर की रक्षा के लिए दसतार बांधी जाती है जबकि टोपी का प्रयोग सिर को ढकने के लिए किया जाता है।

विद्वानों का कथन है कि मनुष्य की पहचान तीन चीजों से होती है- दसतार, गफतार और रफ्तार। भाव यह कि उसके सिर पर सजी दसतार किस प्रकार की है? उसका बातचीत करने का लहजा किस प्रकार का है? उसके चलने का तरीका क्या है? सबसे अधिक प्रभावशाली उसके सिर पर सजी दसतार होती है। दसतार उसकी शख्सियत की पहचान होती है, देखने वाले पर प्रभाव पड़ता है। सिख की पहली पहचान ही दसतार है। लाखों की एकत्रता में दसतार वाला सिख दूर से ही पहचाना जाता है।

३ मार्च, १९०७ को लायलपुर में श्री बांकेदयाल ने अपनी कविता 'पगड़ी संभाल ओ जट्टा पगड़ी संभाल ओए' तरन्नुम में पेश की। इस कविता के बोल इतिहास बन गए। यह गीत हर जुबान और हर घर में गूंजने लगा।

इस प्रकार पगड़ी से ही सत्कार-भावना और देश में कुरबानी के लिए एक शक्तिशाली लहर चल पड़ी। पगड़ी ने ही देश की शान को फिर बहाल किया।

सिर का बचाव और जान बचाने में सहायक: दसतार सिर का बचाव करती है। चेहरे को सुंदरता प्रदान करती है, यहां तक कि जान बचाने में भी सहायक होती है। बंबई राईटर खबर के अनुसार, बालीवुड के स्टार अमिताभ बच्चन, विदू विनोद चोपड़ा की फिल्म 'एकलव्य' की शूटिंग के दौरान एक हादसे में बाल-बाल बचे। शूटिंग के दौरान एक ऊंट ने अमिताभ के सिर पर वार किया। अमिताभ ने सिर पर कस कर पगड़ी बांधी हुई थी जिसने उन्हें अचानक हुए इस हमले से बचा लिया। ■

शान की पहचान पगड़ी

(पृष्ठ २८ का शेष)

अनुसार पगड़ी की उत्पत्ति का आधार संस्कृत शब्द 'परिकर' से भी प्रतीत होता है, क्योंकि परिकर का तात्पर्य है स्वयं को सुसज्जित करना या तैयार करना। संस्कृत, हिन्दी और पंजाबी के 'परि' शब्द का भावार्थ चारों ओर, इधर-उधर और आस-पास से है एवं 'कर' शब्द से करना, बनाना इत्यादि। इस प्रकार से सिर को चारों ओर से किसी कपड़े से सुसज्जित करने की प्रक्रिया को ही 'परिकर' कहा गया जिससे बना 'पगड़ी'। अंग्रेजी में 'पगड़ी' को **Paggree** कहते हैं जिसका अर्थ है 'कुंडली' या 'घुमावदार' अर्थात **Turban** (टरबन)। इस प्रकार सिर ढकने की प्रथा श्रेयस्कर प्रमाणित हो जाती है। ■

मुहौ कि बोलणु बोलीऐ

*-डा. सुरिंदरपाल सिंघ**

गुरबाणी हमारी एक महान विरासत है जिसमें विचारबोध बुलंदियों द्वारा मनुष्य को आत्मिक ऊंचाइयों से जोड़ने के अनेक भंडार हैं, जहां आत्म-जगत को सोझी बख्शने के साथ-साथ सामाजिक जीवन-युक्ति के ऊंचे आदर्श सिद्धांत भी बनाए गए हैं। गुरू साहिबान और भक्तजनों ने बिखरे पड़े मानव को एक परिपूर्ण जीवन देने के लिए बड़ी आशा से अति ऊंची तथा निर्मल जीवन-दिशा बख्शिश की है जिसको धारण करके उलझा हुआ मानव भी रूहानियत प्राप्त कर सकता है।

गुरबाणी ऊंची सैद्धांतिक दिशा सहित एक संपूर्ण जीवन जीने के अनेक प्रयासों का भरपूर खजाना होते हुए अमृत वेला में उठने, नाम जपने, किरत करने, बांट कर छकने, सभी मानवों को बराबरी का दर्जा देने, सच की पहचान करने और सच्चा व निर्मल जीवन जीने का महत्व प्रकट करते हुए सुंदर बोलने की अच्छी युक्ति देती है। यहां समझने-समझाने के लिए अपने पहले अर्थों में नि:संदेह गुरबाणी रूहानीयत से संबंधित रहती है लेकिन समाज को शोधने की एक अच्छी जीवन-युक्ति का संदेश भी इसमें समाया हुआ है।

भारतीय परंपरा से अलग, अनूठी विचारधारा और सजी-संवरी सिक्खी जीवन रहनी के सृजक साहिब श्री गुरू नानक देव जी ने कुल संसार को अकाल पुरख के चिंन्ह, सच-आचार पर सच्चे एवं निर्मल जीवन को अति उत्तम विचारों के साथ निमार्णित करने के लिए *'जुगति डंडा परतीति'* के युगो-युग समर्थ आधार पर खड़ा करते हुए और भी साकारात्मक विचारों को साथ जोड़ दिया। इस संबंधी समय-समय विचारें चलती रहती हैं। गुरू साहिबान और भक्तजनों द्वारा अच्छा बोलने संबंधी प्रगटाए विचारों में से कुछ-एक को विचाराधीन लाना है।

हर दौर में जीवन की बहुरंगी अंतर-सुचज्जता में मीठा बोलने का बड़ा महत्व रहा है। यह सामान्य सामाजिक विचार है कि कड़वा-कड़वा बोलना तो सर्त्ती कपड़ीं आग लगा देता है भाव दूसरों को अत्यंत उत्तेजित कर देता है और मीठा बोलना हृदय को शीतल कर देता है। मीठा बोलना एक बड़ी कला है। वह मानव सियाना और सूझवान है जो मुश्किलों भरे समय में भी समतोल कायम रखता है। वह प्रत्येक परिस्थिति में जुबान से मीठा ही बोलता है। दूसरी ओर इससे उलट व्यवहार करने वाला व्यक्ति अपने लिए भी मुश्किलें खड़ी करता है और साथ ही दूसरे को भी परेशान करता है। उस बंदे को कोई अच्छा कैसे कह सकता है जो बिना सोचे अच्छी बात के प्रति उत्तर में भी तड़ाक डंडा मारने की तरह सारा माहौल ही खराब कर देता है? इस तरह कुछ एक सूझवान के मुख से उच्चारण किये जाते मिशरी घुले शब्द मन-अंतर की बात भी कहते हैं, उच्चारण करने वाले को भी शोभा देते हैं और श्रवण करने वाले के मन-मस्तिष्क में भी

** पत्तण वाली सड़क, शाला पुराना (गुरदासपुर)।*

मिठास का संचार करते चले जाते हैं।

हमारे आदि सिद्धांतों के प्रथम सृजक गुरदेव जी ने इस प्रसंग में अपनी आधारशिला कायम करते हुए भी अपनी बाणी जपु जी साहिब में बोलने-चालने का फलसफा ही पेश कर दिया। आप फरमान करते हैं:

मुहौ कि बोलणु बोलीऐ . . . ॥ (पन्ना २)

फिर आप ही उत्तर बख्शिश करते हैं:

. . . जितु सुणि धरे पिआरु ॥ (पन्ना २)

बेशक उन्होंने ये प्रवचन परमसत्ता के प्रसंग में उच्चारण किये हैं लेकिन सामान्य जन-जीवन में भी इनका बहुत बड़ा महत्व है। ये प्रवचन संत-जनों के लिए प्रयोग हुए आम लोगों के लिए भी उतने ही प्रासंगिक हैं। बल्कि कहना तो यह बनता है कि संत-जन तो रूहानी कमाई वाले पहले ही सही मार्ग पर चल रहे होते हैं इसलिए उनसे ज्यादा आम साधारण सामाजिक मानव को ऐसे आचरण की अधिक जरूरत होती है ताकि वे भी अपने जीवन में इस ऊंचे विचार को धारण करके सुंदर मुहब्बत भरे बोल बोलने वाली युक्ति सीख सकें।

इसी तरह साहिब श्री गुरू नानक देव जी ने बड़बोलों भाव गलत बोलने वालों को समझाते हुए फरमाया है:

जे को आखै बोलुविगाडु ॥
ता लिखीऐ सिरि गावारा गावारु ॥ (पन्ना ६)

अर्थात् बुरा बोलने वाला गंवार कहलवाने का अधिकारी बनता है और उसको मूर्खों में सबसे बड़ा मूर्ख कहा जा सकता है।

गुरदेव जी की पावन बाणी में इस प्रसंग का और भी विस्तार प्राप्त होता है जब वे कुसुंदर बोलने वाले को यह कु-अच्छा छोड़ने के लिए फरमान करते हैं कि बुरा बोलने वाले का अपना मुंह तो फीका होता ही है, इसके साथ-साथ ही उसका समूचा तन और मन दोनों ही फीके हो जाते हैं और उसकी इज्जत भी फीकी हो जाती है अर्थात् उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा में भी कमी आ जाती है। गुरदेव जी फरमान करते हैं:

नानक फिकै बोलिऐ तनु मनु फिका होइ ॥
फिको फिका सदीऐ फिके फिकी सोइ ॥
(पन्ना ४७३)

गुरदेव जी की अगुआई के अनुसार फीका बोलने वाला व्यक्ति मूर्ख कहलाता है और वह कठोर दण्ड का भागी बन जाता है:

फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ ॥
फिका मूरखु आखीऐ पाणा लहै सजाइ ॥
(पन्ना ४७३)

पंचम पातशाह श्री गुरू अरजन देव जी ने अच्छा बोलने को एक नया अर्थ ही दे दिया है। जिस समय और स्थितियों के अनुसार एक बार वे अपने गुरदेव पिता श्री गुरू रामदास जी से कुछ समय के लिए बिछुड़े तो उनके लिए दूर रहना असंभव बन गया, लेकिन हुक्म, अनुमति के बिना न आने का था। उन्होंने वियोग की विह्वलता से मिलने की विनती जिन भाव-भीने शब्दों में प्रकट की वे अपने आप में उदाहरण ही बन गए। आप को कुछ समय के लिए अपने गुरदेव पिता जी के दर्शन प्राप्त न होना ऐसा लगता है जैसे सारंग पक्षी को जल की एक दुर्लभ बूंद की प्राप्ति न हो रही हो। आप गुरदेव जी के मुखारबिंद से उच्चारण किये मीठे वचनों को *'सहज धुनि बाणी'* और उच्चारक मुख को *'मुख सुहावा'* कह कर मिलने की वंदना करते हैं। आप को यूं व्यतीत हो रहा वक्त बहुत कठिन लग रहा है :

तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी ॥

(शेष पृष्ठ ३५ पर)

आरती : गुरबाणी के प्रकाश में

*-बीबी हरप्रीत कौर**

धर्म के व्यवहारिक और संस्थागत पक्ष के साथ सम्बंधित 'आरती' संसार के अनेक मत-मतांतरों में पूजा करने की एक मुख्य विधि है। भारतीय धार्मिक परंपरा में नौ प्रकार की भक्तियों (श्रवण, कीर्तन, सुमिरन, चरण-सेवा, आरती, वंदना, सखय, दास-भाव, आत्म-निवेदन) में 'आरती' एक मानी गई है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में लगभग १२ बार यह शब्द केवल एक ही व्याकरणिक रूप में प्राप्त है। भक्त धन्ना जी की प्रसिद्ध पंक्ति *'गोपाल तेरा आरता' (पन्ना ६९५)* में 'आरता' शब्द 'महान कोश' और 'श्री गुरू ग्रंथ साहिब दर्पण' के अनुसार संस्कृति के 'आर्त' से है, जिसका अर्थ है पीड़ित, दुखी या भिखारी आदि।

शाब्दिक अर्थों में इसके कोशगत और व्यवहारिक अर्थ, रात के समय (शाम को) अपने आराध्य के आगे दीए घुमाने की 'क्रिया' है। गुरबाणी के अनुसार वास्तव में इस व्यवहारिक 'क्रिया' का 'तत' के साथ कोई सम्बंध नहीं। असल आरती तो गुरबाणी के अनुसार यह है:

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे ॥
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे ॥ . . .
कहै रविदासु नामु तेरो आरती सति नामु है हरि भोग तुहारे ॥ (पन्ना ६९४)

'सोहिला' (पृष्ठ १२-१३) बाणी के प्रसिद्ध शब्द-"*गगन मै थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती—धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती*" में ब्रह्मंडीय कौतुकों (जन्म-मरण, संसार के पासार, चांद-सितारों की लीला, जीवन के लाखों असगाह सागर आदि) के अपने आप चल रहे बेअंत क्रिया-कलापों की बेअंतता को आरती का नाम दिया है, जिन बेअंत क्रिया-कलापों के साथ एक-सुर होने पर इस (दीपकों वाली) बहुत सीमित आरती का कोई अर्थ नहीं रहता, इस सम्पूर्ण ब्रह्मांड की 'चलण' समुच्चता को देखकर आनंदित हुए गुरू साहिब सभी प्रकार के 'चलणों' को (जो भी उसे 'अच्छे' लग रहे हैं, उन्हें सभी कुछ ही अच्छा लग रहा है, इसलिए 'सभी कुछ' ही) 'आरती' की संज्ञा देते हैं:

जो तिसु भावै सु आरती होइ ॥ (पन्ना १३)

भक्त कबीर जी असल 'आरती' की विधि और स्वरूप को समझाते हुए 'सतिगुरू की पूजा' को आरती करना ही बताते हैं:

लेहु आरती हो पुरख निरंजन सतिगुर पूजहु भाई ॥ (पन्ना १३५०)

'सतिगुरू-पूजा' क्या है? गुरबाणी ने कई स्थानों पर समझाया है:

-प्रभ पूजहो नामु अराधि ॥ (पन्ना १३०४)
-पूजा कीचै नामु धिआईऐ बिनु नावै पूज न होइ ॥ (पन्ना ४८९)

उपरोक्त विचार के बाद गुरबाणी के प्रकाश में आरती यह है:-

१. प्रभु का नाम ही हमारे लिए आरती है।
२. ब्रह्मांड का जो महान चलन है, यह

**c/o* *अकैडमी आफ सिख रिलीज़न एण्ड कल्चर, १-ढिल्लों मार्ग, पटियाला-१४७००१*

अपने आप में आरती हो रही है। दूसरे शब्दों में ब्रह्मांड में होने वाली घटना 'क्रिया' हमारे लिए आरती है।

३. 'सतिगुरू की पूजा' ही हमारे लिए आरती है। सतिगुरू की पूजा 'नाम' ही है। इसलिए गुरबाणी के प्रकाश में आरती को इस तरह से परिभाषित किया जा सकता है- *'नाम'* और *'ब्रह्मंडीय क्रिया-कलाप' आरती है।*

नोट :

१. गुरबाणी में 'नाम' और 'पूजा' एक अलग लेख की मांग करते हैं, इसलिए इन पक्षों को यहां पर नाम मात्र ही प्रयोग में लिया है।

२. आरती के बारे में, सांसारिक मत-मतांतरों के बीच की पूजा करने की विधियों के तरीके, कारण, स्वभाव और इसके अतिरिक्त और अधिक गहरा अध्ययन भी पेश किया जा सकता है।

३. गुरबाणी में आए और अधिक पूजाचार की विधियों आदि के संकेतों (आसनों, पूजा, जपु, तपु आदि) के प्रसंग में आरती व्यापक अर्थ प्राप्त कर लेती है और ये सब समानार्थी ही हो जाते हैं।

अनुवादक : बीबी वलविंदर कौर

■

मुहौ कि बोलणु बोलीऐ *(पृष्ठ ३३ का शेष)*

चिरु होआ देखे सारिंगपाणी ॥
धंनु सु देसु जहा तूं वसिआ मेरे सजण मीत मुरारे जीउ ॥ *(पन्ना ९६)*

बाबा फरीद जी ने भी अपनी मिष्ट-भाषी बोली को अपने स्नेही नज़रिए से विचार कर अपने विचार अपने पावन शब्दों में दर्ज कर दिए। बाबा जी के अनुसार जब सभी मानवों में 'एको परम-सत्य' का निवास है और सभी मनुष्य बहुमूल्य मानक मोती हैं तो फिर उनको कुबोल कैसे बोले जा सकते हैं? बाबा जी ने मानस होने की मूल्यवानता को दर्शाते हुए मीठा बोलने को असीम महत्व वाला बना दिया। आपका फरमान है :

इकु फिका न गालाइ सभना मै सचा धणी ॥
हिआउ न कैही ठाहि माणक सभ अमोलवे ॥
(पन्ना १३८४)

आइए! इस प्रसंग को जरा बारीकी के साथ विचार में लाया जाए। हम कभी भी कड़वा-कुसैला न बोलें। यह तो एक सिद्ध हो चुका सच है कि कड़वा बोल मन को दुख देता है। मन को दुखाने का यह कार्य फिर करना ही क्यों है? बल्कि हम संयमी, विचार भरा परंतु मीठा युक्तिपूर्ण बोल- व्यवहार धारण करते रहें, जो हमारे मन को बेचैन न करे और सुनने वाले को भी आंसू न बहाने पड़ें। हमारे महापुरुष हमें सुंदर बोलने की प्रेरणा देते आए हैं। हमें विचार भरे बोल-व्यवहार की सदियों से चली आ रही अच्छी परंपरा को धारण करना है और हम सब को इसको और अधिक आगे बढ़ाने के लिए सामाजिक जीवन में आगे आना चाहिए। ऐसे ही हम सामाजिक जीवन में से बुरे बोलों को समाप्त करने में सफल हो सकते हैं और अधिक सुंदर जीवन जीने की बलवान विचारधारा को और भी बलवान बना सकते हैं।

■

गुरबाणी में नाम-सुमिरन का संकल्प

*-बीबी वलविंदर कौर**

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की सम्पूर्ण बाणी रूहानियत का अथाह सागर है। जो लोग इसकी गहराई तक पहुँचते हैं उन्हें बाणी में से गुरमति विचारों के पवित्र मोती प्राप्त होते हैं। गुरबाणी में तीन शुभ गुणों को धारण करने पर बहुत जोर दिया गया है, वे हैं- १. सुमिरन, २. सेवा, ३. कुर्बानी। जो लोग इन तीनों महान शुभ गुणों को अपने जीवन में धारण कर लेते हैं वे जीवन-मुक्त होने की उच्च पदवी को प्राप्त कर लेते हैं। गुरू-वाक्य है:

जीवन मुकति सो आखीऐ मरि जीवै मरीआ ॥
जन नानक सतिगुरु मेलि हरि जगु दुतरु तरीआ ॥ *(पन्ना ४४९)*

'मरि जीवै मरीआ' का भावार्थ है कि जो गुरसिख सुमिरन करके अपने अहंकार को मार देता है, वह जीवन-मुक्त और अमर हो जाता है। यहां पर मरने का अर्थ शारीरिक मृत्यु नहीं है, बल्कि मन को मार कर, अहंकार का त्याग करके *'कबीर तूं तूं करता तू हूआ'* की अवस्था में पहुँचने से है। सुमिरन के बारे में जिज्ञासु बहुत प्रश्न करते हैं। इस लेख में गुरबाणी के अनुसार सुमिरन के सिद्धांत पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब की पवित्र बाणी में नाम-सुमिरन की जो महिमा का वर्णन किया गया है, उसके सम्बंध में गुरबाणी में से ही प्रमाण देकर एक प्रमुख विधि को समझाने का प्रयत्न किया गया है जिसका वर्णन निम्न है-

गुरबाणी में प्रभु के नाम को *'सरब रोग का अउखदु नामु'*, नाम-अमृत, नाम-महारस, नाम बोहिथ आदि विशेषणों के साथ याद किया गया है। इन विशेषणों के प्रमाण सारी गुरबाणी में बहुत मिलते हैं, जिनकी पूरी व्याख्या की जाए तो कई पुस्तकें लिखी जा सकती हैं, परंतु यहां पर जरूरत मात्र प्रमाण पेश किए जा रहे हैं-

सरब रोग का अउखदु नामु:- यह एक अटल सच्चाई है कि नाम मनुष्य के सभी मानसिक और शारीरिक रोगों की दवाई है, परन्तु इसे किस संयम के साथ जपना चाहिए, इसका ज्ञान भी हमें गुरबाणी में से ही प्राप्त होता है:

-हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥
गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥ *(पन्ना २५९)*

-सिमरत सिमरत प्रभ का नाउ ॥
सगल रोग का बिनसिआ थाउ ॥ *(पन्ना १९१)*

-संसारु रोगी नामु दारू मैलु लागै सच बिना ॥ *(पन्ना ६८७)*

-जो जो दीसै सो सो रोगी ॥
रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी ॥ *(पन्ना ११४०)*

नाम की खास विशेषता यह है कि यह नाम सभी रोगों का इलाज करने वाला है। मेडिकल साइंस को जानने वालों को ज्ञान है कि इस साइंस ने प्रत्येक रोग का अलग-अलग इलाज बताया है। इस साइंस में तो शरीर के अलग-अलग रोगों के लिए अलग-अलग स्पेशलिस्ट होते हैं लेकिन वे सभी केवल उसी रोग का ही इलाज कर सकते हैं दूसरे रोगों का नहीं। यह

**खोज विद्यार्थी, दर्शनशास्त्र अध्ययन विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला-१४७००२*

एक हैरानीजनक सच्चाई है कि केवल नाम-सुमिरन ही एक ऐसी दवाई है जो सारी मानवता के सारे ही मानसिक और शारीरिक रोगों को दूर करने के लिए समर्थ है। दूसरी बात यह है कि मेडिकल साइंस ने अब तक जो खोज की है वह अधिकतर शारीरिक रोगों के बारे में ही है। मानसिक रोगों के बारे में साइंस अभी तक ज्यादा कुछ नहीं कर पाई है। अब जाकर कुछ डाक्टरों को यह समझ आ रही है कि शारीरिक रोगों की जड़ तो मानसिक रोगों में ही होती है। जब तक लोगों के मानसिक रोगों का इलाज नहीं हो पाएगा तब तक शारीरिक रोग दूर नहीं हो सकते। अत: मानवता के सभी रोगों का इलाज केवल नाम-सुमिरन ही है, जिसका प्रमाण हमें गुरबाणी में से मिलता है:

करि इसनानु सिमरि प्रभु अपना मन तन भए अरोगा ॥ *(पन्ना ६११)*

भाव यह है कि ज्ञान की रोशनी हमें गुरबाणी में से ही मिलती है। जो मनुष्य सुबह जल्दी जाग कर, स्नान करके प्रभु-नाम का सुमिरन करता है, इससे उसका तन और मन दोनों रोग रहित रहते हैं। मेडिकल साइंस तन को रोग रहित रखने के साधन तो हमें बताती है परंतु मन को रोग रहित रखने के बारे में हमें ज्यादा कुछ नहीं बताती। इस कारण तन के रोग भी बढ़ते ही जाते हैं। मानवता को तन और मन को पूर्ण निरोग रखने का सामर्थ्य केवल बाणी से ही प्राप्त हो सकता है। गुरबाणी में भी फरमान है:

अवरि उपाव सभि तिआगिआ दारू नामु लइआ ॥
ताप पाप सभि मिटे रोग सीतल मनु भइआ ॥
गुरु पूरा आराधिआ सगला दुखु गइआ ॥
राखनहारै राखिआ अपनी करि मइआ ॥
(पन्ना ८१७)

इस सिद्धांत को सिद्ध करने के लिए गुरबाणी में से अनेक ही प्रमाण दिए जा सकते हैं और इस लेख का बहुत विस्तार हो सकता है। *'सरब रोग का अउखदु नामु'* के प्रसंग में गुरबाणी में से अनेकों ही प्रमाण दिए जा सकते हैं। इसी तरह से 'नाम अमृत है' के बारे में भी बहुत से प्रमाण मिल सकते हैं:

-वाहु वाहु साहिबु सचु है अंम्रितु जा का नाउ ॥
(पन्ना ५१५)

-अंम्रित नामु मंनि वसाए ॥
हउमै मेरा सभु दुखु गवाए ॥ *(पन्ना ११८)*

-अंम्रितु हरि हरि नामु है मेरी जिंदुड़ीए अंम्रितु गुरमति पाए राम ॥
(पन्ना ५३८)

-अंम्रितु नामु निधानु है मिलि पीवहु भाई ॥
(पन्ना ३१८)

नाम महारस है:

बिखै बनु फीका तिआगि री सखीए नामु महा रसु पीओ ॥
बिनु रस चाखे बुडि गई सगली सुखी न होवत जीओ ॥ *(पन्ना ८०२)*

बाबा फरीद जी ने संसार के अन्य रसों और नाम-महारस का निजी तजुर्बे के आधार पर अंतर करके यह फैसला दिया है कि जिसे नाम का महारस प्राप्त हो गया फिर उसे दूसरे सारे रस फीके लगते हैं:

फरीदा सकर खंडु निवात गुड़ु माखिओ मांझा दुधु ॥
सभे वसतू मिठीआं रब न पुजनि तुधु ॥
(पन्ना १३७९)

प्रभु का नाम सच्चा धन है। श्री गुरू अमरदास जी महाराज ने प्रभु के नाम को सच्चा धन कहा है और दुनियावी धन को

कच्चा धन कहा है। आप जी धनासरी राग में फरमान करते हैं:

काचा धनु संचहि मूरख गावार ॥
मनमुख भूले अंध गावार ॥ . . .
साचा धनु गुरमती पाए ॥
काचा धनु फुनि आवै जाए ॥ (पन्ना ६६५)

सच्चे नाम-धन में और दुनियावी धन में यह अंतर है कि नाम-धन लोक-परलोक दोनों जगहों पर सहायता करता है, परंतु कच्चा धन केवल यहीं पर ही रह जाता है। सच्चे धन के खजाने में कभी कमी नहीं आती। कच्चा धन व्यर्थ चला जाता है, उसे चोर चुरा लेता है, परन्तु सच्चे धन को कोई चुरा नहीं सकता और न ही कोई छीन सकता है।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी सच्चे नाम-धन का भंडार हैं, जिसके बारे में गुरबाणी में फरमान है:

पीऊ दादे का खोलि डिठा खजाना ॥
ता मेरै मनि भइआ निधाना ॥
रतन लाल जा का कछू न मोलु ॥
भरे भंडार अखूट अतोल ॥
खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥
तोटि न आवै वधदो जाई ॥ (पन्ना १८६)

प्रभु का नाम जीव को इस संसार रूपी सागर से पार लेकर जाने वाली किश्ती है। यही बाणी आज तक करोड़ों जीवों का इस संसार रूपी सागर से पार उतारा कर चुकी है और रहती दुनिया तक करती रहेगी। ■

महान बलिदानी—चारों साहिबज़ादे

*-स. अवतार सिंघ**

महान है कुल खालसे का,
जहां साहिबज़ादों ने जन्म लिया।
दादा जी ने जिस कुल की शान को,
और भी रौशन किया।
फतह जोरावर सिंघ दादी संग,
पार करते सरसा को बिछुड़े।
गद्दार गंगू की गद्दारी से,
फूल ज़ालिमों के हाथ पड़े।
दादा जी की राह पे चलकर,
कुल और रौशन करने की ठानी।
औरंगज़ेबी शासन जो था,
कहता था कि धर्म बदलो
वज़ीर खान ने कहा उनसे
मुसलमान बनो या मौत चुन लो।
वज़ीर खान जालिम ने फिर
नीवों में चुनने का हुक्म सुनाया।
अडोल रहे फिर भी साहिबज़ादे
और शहीदी को अपनाया।
तैयार हुए जीवन देने को,
साहिबज़ादों ने हार न मानी।
टिड्डी दल से बैरी दल का
सीना तान सामना किया।
अजीत सिंघ जुझार सिंघ ने,
जूझते शहीदी जाम पिया।
साहिबज़ादों की कुर्बानी को,
याद आंसू भर करते आज!
गुरू गोबिंद सिंघ के साहिबज़ादो!
हमें आप पर रहेगा नाज़! ■

**सस्ता वस्त्र भंडार, नाका रामनगर रोड, फैजाबाद (यू. पी.)-२२४००१*

पंथ को प्रपंचवाद से बचाना होगा!

*-स. गुरदयाल सिंघ 'दयाल'**

सुनो खालसा जी, पंथ को प्रपंचवाद से बचाना होगा!
गुरमति सोच देकर भटकों को, मनमति से हटाना होगा!
नकली संत-बाबे हो गए बहुत पैदा, इनमें न कोई गुण न कायदा,
इस नकलवाद को झुका कर, झंडा असलवाद का उठाना होगा!
बाबों में कुछ बन बैठे हैं गुरू, जिन्होंने धर्म का 'क ख' पढ़ना न किया शुरू,
इन ठेठ नकलचियों को, मनआइयों से हटाना होगा!
भिन्न-भिन्न फिर नाम हैं इनके, भिन्न-भिन्न ही धाम हैं इनके,
इस अनेकवाद को रोक कर, चलन एकवाद का चलाना होगा!
चिकने-चुपड़े रूप हैं इनके, मन न पर अनुरूप हैं इनके,
भोली शक्लों वाले जल्लादों की, बातों में न आना होगा!
कपड़े पहनें ये झक-झक सफेद, खुशबोइयों से होते हैं लबरेज,
विचलित न हो जाएं कहीं, यह आंखों को सिखलाना होगा!
बढ़िया-बढ़िया 'एसी-वैन' हैं इनके, तगड़े-तगड़े 'गनमैन' भी इनके,
इस महंतवाद को बंद कर, जीवन स्-संतवाद का दिखलाना होगा!
ये लोगों को तोड़ने वाले, सच्चाई से मोड़ने वाले,
इस तोड़वाद को अलग कर, जोड़वाद खालसाई अपनाना होगा!
ये कच्ची-बाणी हैं पढ़ते, कच्ची कथा-कहानियाँ घड़ते,
इस रसवाद से पिंड छुड़ा कर, साथ संतवाद का निभाना होगा!
ये चिमटे-बाजे खूब बजाते, यह ऊँची सुरों में गाते,
इस शोरवाद से वर्ज कर, लोगों में सुख सहज लाना होगा!
ये समाधियां लगाते झूठी, इनकी धार्मिक रसमें भी अनूठी,
इस सबको फोकट कर्म बतलाकर, लोगों को समझाना होगा!
ये मुट्ठी-चापी बहुत करवाते, ये चरण-गोढ भी हैं पुजवाते,
इनकी पूरी कलई खोल कर, फरेब अंदर का दर्शाना होगा!
गोलक-रसीदों की ये निंदा करें, लंगर-प्रथा को ये फजूल 'धंधा' कहें,
इन कुल बातों को दरकिनार कर, रीत पुरातन ही बढ़ाना होगा!
सज्जनतापी का ये न कोई काम करें, संगतों को लूट ये अपनी जेबें भरें,
इस लूटपाट से आगाह कर, संगतों को बचाना होगा!
गुरू ग्रंथ साहिब के सम्मान के लिए, अकाल तख्त साहिब की आन के लिए,
सिखी का प्रचार चला कर, 'दयाल' इतिहास दोहराना होगा!

**गुरुद्वारा साहिब कॉलोनी, चास, बोकारो (झारखंड)*

गुरबाणी चिंतनधारा-१५

जापु साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

नमसतं त्रिनामे ॥ नमसतं त्रिकामे ॥
नमसतं त्रिधाते ॥ नमसतं त्रिघाते ॥११॥

हे अकाल पुरख! तुझे इसलिए भी नमस्कार है कि तेरा कोई एक नाम नहीं। तुझे किसी विशेष नाम से नहीं जाना जा सकता और न ही तुझे कोई कामना है, तू निष्काम है। दुनिया के प्रत्येक जीव की कोई न कोई कामना है। विचारणीय तथ्य यह है कि इन कामनाओं के कारण ही जीव बन्धनों में फंसे हैं। जिसकी कामनाओं का दायरा जितना विशाल है उतना ही अधिक वह प्राणी दुखों में ग्रसित है और इन्हीं कामनाओं की दलदल उसे बार-बार चौरासी के गेड़ में धकेलती है। गुरू पातशाह फरमान करते हैं कि कामना से रहित परमात्मा जगत जीवों की तरह पाँच तत्वों- 'पृथ्वी, जल, अग्नि, हवा तथा आकाश' और इन पांच तत्वों के गुण हैं- 'रूप, रस, गंध, स्पर्श तथा शब्द।' तेरे निघ्रात स्वरूप को भी नमस्कार है क्योंकि तुझ पर कोई वार नहीं कर सकता अर्थात् तुझे कोई किसी तरह भी चोट नहीं पहुंचा सकता।

नमसतं त्रिधूते ॥ नमसतं अभूते ॥
नमसतं अलोके ॥ नमसतं असोके ॥१२॥

हे परवरदिगार! तुझे इसलिए भी नमस्कार है कि तुझे कोई तेरे स्थान से हिला नहीं सकता क्योंकि किसी में इतनी सामर्थ्य नहीं है जो तेरी हस्ती को टस से मस भी कर सके। तेरा वजूद जगत-रचना वाले पाँच तत्वों से निर्मित नहीं है। हे ईश्वर! तू ज्ञानेन्द्रियों की पहुंच से परे है इसलिए इन नेत्रों द्वारा तुझे देखा नहीं जा सकता, अत: तेरे दर्शनों हेतु ज्ञान-चक्षुओं की जरूरत पड़ती है, ज्ञान रूपी अंजन की आवश्यकता होती है, इसीलिए तो सुखमनी साहिब के २३वें श्लोक फरमान है:

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥
(पन्ना २९३)

गुरबाणी में अनेक स्थानों पर यही भाव दृष्टिगत होता है जैसे, कि:

तिमर अगिआनु गवाइआ गुर गिआनु अंजनु गुरि पाइआ राम ॥
गुर गिआन अंजनु सतिगुरू पाइआ अगिआन अंधेर बिनासे ॥ (पन्ना ५७३)

ये ज्ञान-चक्षु, यह ज्ञान का अंजन गुरू-रहमत का सदका प्राप्त होता है। जिसे अकाल पुरख की रहमत से पूर्ण गुरू मिल जाए उसे ही पूर्ण गुरू की रहमत से उस अकाल पुरख के दीदार की समर्थता अर्थात् उसमें एक रूप होने की युक्ति प्राप्त होती है।

हे परमेश्वर! तुझे कोई फिक्र या चिन्ता, दुख, क्लेश, संताप छू भी नहीं सकता। हे चिन्ता रहित परमात्मा! तुझे नमस्कार है। श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी महाराज उस सर्वगुण, सर्वशक्तिमान परमात्मा के प्रत्येक रूप को नमन करते हैं। कलयुगी जीवों का मार्ग प्रशस्त करते हुए गुरदेव सारी लोकाई को उस अकाल पुरख की सिफत-सलाह करते-करते उस परामात्मा के गुणों को हृदय में बसाने की युक्ति बताते हैं। अत: गुरदेव के उपदेशों पर चल कर आओ, हम भी उसी ईश्वर का श्वास-ग्रास

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर (राजस्थान)-३०२००४*

सुमिरन करें।

नमसतं त्रितापे ॥ नमसतं अथापे ॥
नमसतं त्रिमाने ॥ नमसतं निधाने ॥१३॥

हे अकाल पुरख! तुझे नमस्कार है। हे प्रभु! तू तीनों तापों से रहित है। प्रो साहिब सिंघ जी के चिन्तनानुसार तीन ताप ये हैं:- आध्यात्मिक ताप-वे ताप जो 'मन' से उठते हैं। आधिदैविक ताप- वे ताप जो इंसान की किस्मत में आते हैं। आधिभौतिक ताप- जो मनुष्य को एक-दूसरे से मिलते हैं।

पर हे प्रभु! तू उपरोक्त तीनों तापों से अर्थात् क्लेशों से परे है। कहने से भाव, तू निर्+ताप अर्थात् तापों से रहित है। ये संताप तुझे छू भी नहीं सकते। हे ईश्वर! तुझे नमस्कार है। तू अथाप है अर्थात् देवताओं की मूर्तियों (प्रतिमाओं) की तरह तुझे किसी मंदिर आदि में स्थापित नहीं किया जा सकता। हे प्रभु! तीनों ही लोकों के जीव तुझे प्रणाम करते हैं। तू गुणों का निधान है अर्थात समस्त गुणों, पदार्थों तथा सुखों का भंडार है। हे ईश्वर! तुझे नमस्कार है।

नमसतं अगाहे ॥ नमसतं अबाहे ॥
नमसतं त्रिबरगे ॥ नमसतं असरगे ॥१४॥

हे परमेश्वर! तुझे नमस्कार है। तू अथाह एवं अगाध है, अत: तेरी थाह नहीं ली जा सकती अर्थात तू सागर की तरह गहरा है। तुझे नापा नहीं जा सकता। तेरी गहराई का अंदाजा नहीं लगाया जा सकता। तू मानो एक ऐसा पर्वत है जिसे हिलाया नहीं जा सकता। तू पर्वत की तरह अडिग है। दुनिया के जीवों हेतु तीन प्रमुख पदार्थ अर्थात दुनियावी जीवन के तीनों पदार्थ (धर्म, अर्थ तथा काम) तुझसे ही प्राप्त होते हैं। हे प्रभु! तू उत्पत्ति से रहित है। तुझे कोई पैदा नहीं कर सकता। तेरी कोई रचना नहीं कर सकता। अत: तुझे नमस्कार है।

नमसतं प्रभोगे ॥ नमसतं सुजोगे ॥
नमसतं अरंगे ॥ नमसतं अभंगे ॥१५॥

हे प्रभु! तुझे नमस्कार है। तू जगत के समस्त पदार्थों को भोगने वाला है क्योंकि तू सृष्टि के सभी जीवों में पूर्णतया समाया हुआ है। इतना सब कुछ होते हुए भी अन्य जीवों की तरह तेरा कोई विशेष रंग नहीं है। तू जगत के पदार्थों को सांसारिक जीवों की तरह भोग-भोग कर कभी नाश नहीं होता है जीव जन्म लेते हैं, पदार्थों का भोग करते हैं और भोग करते-करते उनकी जीवन-लीला खत्म हो जाती है। केवल एक तू ही है जो सदैव कायम रहता है। समस्त जीवों में रहते हुए भी तू सबसे निर्लेप है। ऐसे परमेश्वर को गुरदेव नमस्कार करते हैं।

■

कविता

एक बात

-डॉ. शांतिलाल सिणोज़िया*

एक बात माँ ने कही थी-
सुन मेरे लाल, सुन मेरे पुत्र,
तेरा तन भले बिक जाये मगर,
आत्मा को कभी बिकने न देना!
जिन्दगी में आए मुसीबत जब,
तू मन को उदास होने न देना!
एक बात माँ ने कही थी-
सुन मेरे लाल, सुन मेरे पुत्र,
ओछी राजनीति के नजदीक न जाना तू!
ग़रीबों के वास्ते स्नेह-झरना बहाते रहना तू!
मन को कभी न उनसे दूर रखना तू!
एक बात माँ ने कही थी-
सुन मेरे लाल, सुन मेरे पुत्र,
आँधी में तूफान में विचलित न होना तू!
आशा में विश्वास में, हर समय जीना तू!
पढ़-लिख कर देश के काम तू आना,
मगर, इंसानियत को भूल न जाना तू!

**व्याख्याता-ए वी डी एस महाविद्यालय, पो-जामजोधपुर, जिला-जामनगर (गुजरात)*

■

विस्मादी वृत्तांत-१०

मित्र पिआरे नूं

-*डॉ. अमृत कौर**

मुगल सेना द्वारा गऊ-कुरान की कसमें खाने और विश्वास दिलाने पर श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी व उनके सिंघों ने आनंदपुर साहिब का किला छोड़ दिया। दिसंबर महीने के अंतिम दिन थे। कड़ाके की ठंड तथा मूसलाधार वर्षा की ठंडी भयानक रात्रि थी। गुरू जी सरसा नदी पार कर ही रहे थे जब मुगलों ने खाई कसमें तोड़ कर पीछे से आक्रमण कर दिया। "जोड़ा किसे पासे-जोड़ा किसे पासे।" गुरू जी का परिवार उनसे बिछुड़ गया। दोनों छोटे साहिजादे माता गुजरी जी के साथ अलग हो गए। उनके व उनके दरबारी कवियों के द्वारा रचित बहुत सारा अमूल्य साहित्य सरसा नदी की भेंट हो गया। उनके साथ बच गए उनके बड़े दो बेटे साहिबजादा अजीत सिंघ जी तथा साहिबजादा जुझार सिंघ जी और पांच प्यारों सहित चालीस सिख। चमकौर की गढ़ी में गुरू जी व उनके साथियों ने शरण ली। पर यहां पर भी मुगल सेना ने उनका पीछा नहीं छोड़ा और दस लाख के करीब मुगल सेना ने गढ़ी को चारों ओर से घेर लिया। परन्तु गुरू जी व उनके साथियों ने साहस नहीं छोड़ा। गुरू जी ने अपने साथियों का मनोबल ऊंचा करते हुए कहा, "आगामी आने वाले दो-चार दिन हमारे लिए निर्णयात्मक दिन होंगे। विशाल सेना ने हमें चारों ओर से घेर रखा है। हमें मारने के लिए या जीवित पकड़ने के लिए आक्रमण करेंगे, परन्तु आप ने साहस नहीं छोड़ना, हिम्मत नहीं हारनी, डटे रहना है, *'सवा लाख से एक लड़ाऊं'* को चरितार्थ करना है, *'निसचै कर आपनी जीत करों'* को सामने रखना है। हम हार भी गए तो दुख नहीं। इस हार में भी जीत हमारी होगी। देश-धर्म की रक्षा करने, निर्बल-निस्तेज जनता को स्वाभिमान से जीना सिखाने के लिए, उनमें वीरता का संचार करने के लिए, हमें बलिदान भी देना पड़े, शहादत का जाम भी पीना पड़े तो हम हंसते-हंसते प्राण हथेली पर रख विदा हो जाएंगे:

सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

गुरू जी और उनके सिंघों को पता था कि यह उनकी जिन्दगी की अन्तिम रात्रि भी हो सकती है, परन्तु उनके हौंसले बुलन्द थे, सभी चढ़दी कला में थे। *'नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत्त दा भला'* और *'सति श्री अकाल'* के नारे शत्रु-दल में कम्पन पैदा कर रहे थे। वे हैरान थे, परेशान थे—किस मिट्टी के बने हैं ये लोग—सब कुछ लुटा कर भी मस्ती का आलम इनके साथ है। भूखे-प्यासे होने पर भी निर्भयता-निडरता इनके सदीवी साथी हैं।" काजी को भेजा सुलह का पैगाम देकर। साहिबजादा अजीत सिंघ जी बोल उठे, "कैसी सुलह? कैसा समझौता? अरे तुम तो गऊ-कुरान की कसमें खाकर भी पीछे से आक्रमण कर देते हो! शर्म नहीं आती समझौते की बात

*१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०५०३

करते? यदि दूत बन कर न आए होते तो अभी तुम्हारा सिर धड़ से अलग कर देता!" कांपता हुआ काजी दुम दबा कर भाग निकला।

सूर्य की प्रथम किरण के निकलते ही शत्रु-दल ने गढ़ी को किले का रूप दे दिया। चारों ओर शूरवीर सिंघ तैनात कर दिए। पांच-पांच सिखों के जत्थे बना कर लड़ने के लिए भेजने शुरू कर दिए। स्वयं गढ़ी के अंदर से निरंतर शत्रु-दल पर तीरों की वर्षा करते रहे। युद्ध की भयानकता को देखकर साहिबजादा अजीत सिंघ (आयु सत्रह वर्ष) का मन युद्ध-क्षेत्र में शामिल होने के लिए बेताब हो उठा। हाथ जोड़ कर प्रार्थना की-"पिता जी! यदि आज्ञा हो तो युद्ध में जाकर वैरी के दांत खट्टे करूं। मेरी तलवार उनके खून की प्यासी है, उन्हें काटने-मारने के लिए बेकरार हो रही है।" सिखों ने रोकना चाहा कि 'साहिबजादे को युद्ध-क्षेत्र में नहीं भेजना, अभी तो इसने जीवन में देखा ही क्या है? अभी तो इसके हंसने-खेलने के दिन हैं। अभी तो इसने यौवन की दहलीज पर कदम रखा है।' परन्तु यौवन की दहलीज पर कदम रखते बड़े बेटे का यह वीरतापूर्ण प्रस्ताव सुनकर गुरू जी गद्गद् हो गए। उन्होंने उसे गले से लगाया, आशीर्वाद दिया, स्वयं हाथों से, शस्त्रों से सुसज्जित किया, प्रार्थना की और सहर्ष भेज दिया शहादत का जाम पीने के लिए, देश-धर्म की रक्षार्थ कुर्बान होने के लिए। साहिबजादा अजीत सिंघ ने वीरता के वे जौहर दिखाए कि शत्रु दंग रह गए। उसकी शूरवीरता को देखकर मुगलों ने दांतों तले उंगली दबा ली। कलगीधर पातशाह की आंखों का तारा *'सवा लाख से एक लड़ाऊं'* की उक्ति को चरितार्थ करता हुआ गुरू जी की आंखों के सम्मुख शहीद हो गया। गुरू जी का सिर गर्व से ऊंचा हो गया। जिस बेपनाह वीरता से वह लड़ा, उन्हें लगा, मानो उनके खालसे के स्वरूप ने उनके सम्मुख साकार रूप धारण कर लिया हो, "शुक्र है वाहिगुरू, तुम्हारी अमानत तुम्हारे चरणों में पहुंच गई।"

अपने बड़े भाई साहिबजादा अजीत सिंघ को शहादत का जाम पीते देखकर छोटा बेटा साहिबजादा जुझार सिंघ (आयु चौदह वर्ष) भी उत्सुक हो उठा-"पिता जी! वीर अजीत सिंघ तो शहीद हो गए, अब मुझे भी आज्ञा दीजिए।" सिखों ने रोकना चाहा परन्तु गुरू जी नहीं माने-"शाबाश बेटे! मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी। जाओ और दुश्मन को बता दो कि सिख बच्चे भी देश की आन और शान की खातिर सिर-धड़ की बाजी लगा सकते हैं।" उन्होंने उसे गले से लगाया, मस्तक चूमा, आशीर्वाद दिया और शस्त्रों से सुसज्जित करके भेज दिया। साहिबजादा जुझार सिंघ के साथी सिख भी भयानक युद्ध कर रहे थे। उनकी तलवारें शत्रुओं को गाजर-मूली की तरह काट रही थीं। उनकी वीरता को देखकर शत्रुओं ने दांतों तले उंगली दबा ली। ऐसे लगा मानो स्वयं मृत्यु मुंह खोले उन्हें काल का ग्रास बनाने के लिए धरा पर उतर आई हो। सिर पर शहादत का सेहरा बांध कर साहिबजादा स्वतन्त्रता की देवी को ब्याहने चले हों और देखते ही देखते सैकड़ों दुश्मनों को तलवार का ग्रास बनाते हुए दशम गुरू के आंखों के तारे उनकी आंखों के सम्मुख शहीद हो गए।

"हो सकता है कल का दिन युद्ध का अन्तिम दिन हो। कल हम स्वयं युद्ध-क्षेत्र में शत्रु के साथ युद्ध करेंगे।"

"गुरू जी! हम आपके इस निर्णय के साथ सहमत नहीं।"

"पर क्यों?" गुरू जी ने प्रश्न किया।

"आज के इस समय में आप ही खालसे को इन विपत्तियों से बाहर निकाल सकते हैं। आप खालसे के जन्मदाता हैं, इसके कर्णधार हैं। यदि कर्णधार ही चला गया तो मझधार में फंसी किश्ती को कौन बाहर निकालेगा?"

"अब हमारे पास और कोई रास्ता भी तो नहीं?"

"गढ़ी को छोड़कर आप यहां से सुरक्षित निकल जाइए।"

"नहीं-नहीं! यह कैसे हो सकता है? मैं अपने प्राणों से प्रिय खालसे को मंझधार में छोड़ कर स्वयं निकल जाऊं, यह असंभव है।"

"परन्तु यदि आप सुरक्षित यहां से चले गए तो हमारे जैसे सैंकड़ों सिंघों को पुन: पैदा कर लेंगे, परन्तु यदि आप ही शारीरिक रूप में न रहे तो इस डूबती किश्ती को कौन पार लगाएगा? गुरू जी! हमें इस विषय के बारे में विचार-विमर्श करनी होगी। हम अभी कुछ ही क्षणों में आपके सामने उपस्थित होते हैं।"

गुरू जी जब किसी तरह भी न माने तो भाई दया सिंघ की अध्यक्षता में पांच सिखों ने गुरमता पास किया। यह सिख धर्म का पहला गुरमता था। गुरू जी को आदेश देते हुए कहा, "आपको खालसे द्वारा आदेश दिया जाता है कि आप गढ़ी छोड़ जाएं।" पांच, परमेश्वर होता है और गुरू जी को उन पांचों के निर्णय को मानना पड़ा। निर्णय हुआ कि तीन सिख भाई दया सिंघ, भाई धर्म सिंघ और भाई मान सिंघ गुरू जी के साथ जाएंगे। हो सकता है गढ़ी से निकलते समय उनके साथी उनसे बिछुड़ जाएं, पर सितारे की दिशा में सीधे चलते जाना है ताकि फिर मिल सकें।

गुरू जी ने अपने अस्त्र-शस्त्र-वस्त्र अपनी सूरत से हूबहू मिलते भाई संगत सिंघ को पहना दिए। अपनी कलगी उसके सिर पर सजा दी यह कहते हुए कि अब मेरा स्थान तुम्हें लेना है। जूते उतार दिए ताकि कदमों की चाप सुनाई न दे। गढ़ी को छोड़ा। थोड़ी दूर आगे जाकर ललकारा, "सिखों का गुरू जा रहा है, किसी में साहस है तो पकड़ लो!"

फिर तीन बार ताली बजाकर कहा, *"हिन्द का पीर जा रहा है, साहस है तो पकड़ लो!"*

यह आवाज सुनकर गहरी नींद में सोई मुगलों की सेना हड़बड़ा कर जाग उठी। पहरे पर तैनात मिशालची भी उनकी ओर भागा। परन्तु गुरू जी ने तीरों की बौछार कर उसे वहीं ढेर कर दिया। मुगल सेना में खलबली मच गई। आपस में ही सिपाही कटने-मरने लगे और गुरू जी व उनके तीनों साथी सिंघ सुरक्षित गढ़ी से बाहर निकलने में सफल हो गए। दूसरे दिन गुरू जी की सूरत से मिलती-जुलती सूरत वाले भाई संगत सिंघ को शहीद कर मुगल सेना में प्रसन्नता की लहर फैल गई कि सिखों के गुरू को शहीद करने में वे सफल हो गए हैं।

इधर गुरू जी तीन दिन लगातार चलते-चलते माछीवाड़े के जंगलों में पहुंचे। जो तीन साथी चमकौर की गढ़ी से साथ चले थे वे निकलते समय अलग हो गए।

गुरू जी लगातार चलते-चलते थककर चूर हो गए। पृथ्वी को बिछौना बना, शिला पर सिर रखे लेट गए। कड़ाके की सर्दी के दिन हैं। तन पर गर्म कपड़ा नहीं, पैरों में छाले पड़ गए हैं। कोई साथी नहीं, संगी नहीं, अनेकों साथियों को अपने सामने शहीद करवा आए हैं। परन्तु फिर भी गुरू जी इन पंक्तियों को गुनगुना रहे हैं:

मित्र पिआरे नूं हालु मुरीदां दा कहिणा ॥
तुधु बिनु रोगु रजाइयां दा ओढणु;

(शेष पृष्ठ ४६ पर)

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-४

कवि एवं सेवक : भाई धन्ना सिंघ

*-डॉ राजेंद्र सिंघ**

दशम पिता श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी का आनंदपुर साहिब स्थित दरबार अपने आप में एक विलक्षण दरबार था। यहां एक से एक योद्धा और विद्वान तो थे ही, साथ ही ये योद्धा और कवि इतने कर्म-प्रिय थे कि मामूली से मामूली काम या सेवा को भी पूरी तनदेही के साथ निभाते। कहीं भी अपने बड़े होने या विद्वान होने का रंच-मात्र भी अभिमान नहीं। ऐसे ही एक विद्वान् कवि और कर्मठ सेवक थे भाई धन्ना सिंघ। भाई धन्ना सिंघ थे तो उच्चकोटि के कवि परंतु उन्होंने जिम्मेवारी संभाल रखी थी गुरू-घर के घोड़ों की सेवा करने की। यहां तक कि घोड़ों के लिए घास भी खुद ही खोद कर लाते।

भाई धन्ना सिंघ श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवियों में से एक थे और अस्तबल में घोड़ों की सेवा करते थे।

आपके जीवन से संबंधित एक विशेष घटना का ज़िक्र लगभग हर सिख ऐतिहासिक स्रोत में मिल जाता है। घटना कुछ इस प्रकार है—एक बार चंदन नाम का एक कवि दशमेश पिता के दरबार में हाजिर हुआ। चंदन का मन्तव्य था कि वह श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी को अपना काव्य सुनाकर राजाश्रय-प्राप्ति के लिए अर्ज करेगा। कवि चंदन जब गुरू जी के दरबार में पहुंचा तो उसे अपनी विद्वता पर घमंड हो आया। उसने सोचा कि गुरू जी के दरबार में तो बढ़ई, लुहार, झीवर, घसियारे जैसे लोग भरे पड़े हैं, ये विद्या और काव्य को क्या समझेंगे? कवि चंदन ने घमंड भरे लहजे में अपना सवैया सुनाया-

नवसात तिये नवसात किये नवसात पिये नवसात पियाए।
नवसात रचे नवसात बचे नवसात पियाया हे दायक पाए।
जीत कला नवसातन की नवसातन के मुख अंचर छाए।
मानहु मेघ कि मंडल मे कवि चंदन चंद कलेवर छाए।

सवैया सुना कर कवि चंदन ने घमंड से कहा कि हे गुरू जी! क्या आपके दरबार में कोई ऐसा विद्वान् है जो इसका अर्थ कर सके। गुरू जी ने घोड़ों को घास चुगाने में व्यस्त भाई धन्ना सिंघ को बुलावा भेजा। भाई धन्ना सिंघ ने सवैये का अर्थ किया- "सोलह वर्ष की कन्या ने सोलह शृंगार किये। उसका पति सोलह महीनों बाद परदेस से लौटा था। पत्नी ने सोलह प्रकार के व्यंजन बनाये, सोलह घरों की चौपड़ की बाजी पति संग खेली। दोनों ने सोलह-सोलह बाजियां/चालें चलीं। पत्नी ने बाजी जीत कर सोलह आने यानी रुपया प्राप्त किया और जब पति जीता तब सोलह कला संपूर्ण अपने चंद्रमुख को नायिका ने वस्त्र में छुपा लिया, मानों चंद्रमा मेघों में छुप गया हो।"

सवैये का अर्थ सुन कवि चंदन हतप्रभ होकर भाई धन्ना सिंघ के सम्मुख नतमस्तक हो

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना।*

गया। कहते हैं इसी समय भाई धन्ना सिंघ ने भी अपने सवैये सुनाये। ये सवैये साबित करते हैं कि कवि धन्ना सिंघ एक उच्चकोटि के कवि थे। इन सवैयों में लाटानुप्रास, विरोधाभास आदि अलंकारों का सुंदर उपयोग हुआ है। एक सवैया इस प्रकार है:

मीन मरे जल के पर से
कबहू न मरे पर पावक पाए।
हाथि मरे मद के पर से
कबहू न मरे तन ताप के आए।
तीय मरे पति के पर से
कबहू न मरे परदेस सिधाए।
गूढ़ मै बात कही दिजराज
बिचार सके न बिना चित लाए।

अर्थात् मछली पानी के स्पर्श से कभी नहीं मरती परंतु आग में पड़ने से मर जाती है। हाथी मद के प्रभाव में आकर कभी नहीं मरता लेकिन तन के ताप से मर जाता है। पत्नी कभी पति के छूने से नहीं मरती लेकिन पति के परदेस चले जाने से मर जाती है। हे द्विजराज! मैंने बहुत गूढ़ बात कही है, बिना चित्त लगाये इसे समझा नहीं जा सकता।

श्रेष्ठ कवि भाई धन्ना सिंघ और उनका काव्य सन् १७०४ ई० में आनंदपुर साहिब की जंग के साथ ही काल की गर्त में समा गया। ■

मित्र पिआरे नूं

नाग निवासां दे रहणा ॥
सूल सुराही खंजर पियाला;
बिंगु कसाइयां दा सहणा ॥
यारड़े दा सानूं सत्थर चंगा;
भट्ठ खेड़िआं दा रहणा ॥ *(दशम ग्रंथ)*

मैं अपने मित्र प्यारे प्रभु के सम्मुख यह निवेदन करना चाहता हूं कि "हे प्रभु! मैं तुझसे विमुख होकर शहाना जिन्दगी जीने से इनकार करता हूं। अपने प्रियतम के साथ रहना, सच्चाई के साथ जीना बेहतर समझता हूं। इसके लिए चाहे मुझे कांटों की सेज पर भी क्यों न सोना पड़े, साधारण झोपड़ी में भी क्यों न रहना पड़े।"

गुरू जी इस शब्द का उच्चारण कर ही रहे थे कि उनके तीनों बिछड़े साथी उनसे आ मिले। गुरू जी को इस दशा में नंगे पांव, शिला पर सिर रखे, पृथ्वी पर लेटे—कोई बिस्तर नहीं, गर्म कपड़ा नहीं, सोते देखकर उनकी आंखें भर आईं, आंसू टपक पड़े, पर शहनशाहों के शहंशाह, उनकी इस भावुकता को देखकर

(पृष्ठ ४४ का शेष)

मुस्करा पड़े और कहने लगे, "क्यों अधीर होते हो? अभी तो हमें बहुत कुछ करना है! अभी मंजिल आगे है! अभी तो धार्मिक और सामाजिक आजादी अनेकों शहीदियों की मांग कर रही है। आओ चलें, मंजिल की ओर बढ़ चलें, फिर से नवनिर्माण करने के लिए।"

ऊषा की इस वेला में जब सूर्य सुनहरी किरणें बिखेर रहा था, आशा का संदेश दे रहा था, नवीन प्राणों का संचार कर रहा था, चार साथी आगे बढ़ते चले जा रहे थे, गाते हुए, गुनगुनाते हुए, प्रभु से प्रार्थना करते हुए। गुरू जी के साथी सिख आश्चर्यचकित थे कि कैसा है यह परम पुरख, जो चारों लालों को देश और कौम की खातिर न्यौछावर करके भी गुनगुना रहा है? क्या कोई अपने दुखों से इतना ऊपर उठकर सम्पूर्ण मानवता की भलाई के लिए, नवनिर्माण के लिए भी सोच सकता है?" उनके सिर गुरू जी के सामने श्रद्धा से झुक गए। सबकी मंजिल एक बन गई। ■

तीस हज़ारी अदालत का नाम
सिख जरनैल स. बघेल सिंघ के नाम पर हो

अमृतसर: शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने केंद्र सरकार से मांग की है कि तीस हज़ारी अदालत का नाम सिख जरनैल स. बघेल सिंघ के नाम पर रखा जाए, हस्तिनापुर तथा मेरठ हवाई अड्डे का नाम पांच प्यारों में शामिल भाई धर्म सिंघ के नाम पर रखा जाए। जत्थेदार अवतार सिंघ ने मेरठ में संगत को संबोधित करते हुए केंद्र सरकार के सामने ये मांगें रखीं। जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि सिख, विश्व के किसी भी क्षेत्र में हों उनको दरपेश किसी भी मुश्किल के समय शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी उनके साथ खड़ी है।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी संगत के हर सुख-दुख में साझेदार होती है। सिख भाईचारे को चाहिए कि वह हर समय श्री अकाल तख्त साहिब को समर्पित रहे। उन्होंने कहा कि समय की जरूरत है कि गुरमति समारोह व अमृत संचार समारोह करवाए जाएं ताकि सिख संगत गुरमति पक्ष से भी जागरूक हो व खालिस समाज की स्थापना के लिए सामाजिक बुराइयों से निजात पाई जा सके। उन्होंने कहा कि सिखों ने हमेशा जब्र-ज़ुल्म के खिलाफ व मानवता की खातिर झंडा बुलंद किया है। बीर खालसा दल के प्रधान स. जे. एस. (सेठी) ने एस. जी. पी. सी. से आग्रह किया कि वे राज्य सरकारों पर सिखों को जनसंख्या के हिसाब से सरकारी नौकरी देने के लिए दबाव बनाएं।

सी. बी. आई. ने जगदीश टाईटलर का केस बंद करके
सिखों के ज़ख्मों पर नमक छिड़का : जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर: शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने सी. बी. आई. द्वारा दिल्ली में १९८४ के सिख कत्लेआम के कथित प्रमुख दोषी जगदीश टाईटलर का केस बंद किए जाने पर प्रतिक्रम प्रकट करते हुए इसे बहुत ही दुखदायी तथा सिख हृदयों को ठेस पहुंचाने वाली कार्यवाही एवं ऐसी जांच एजेंसी के अक्स पर धब्बा करार दिया है। उन्होंने कहा कि १९८४ में देश के अलग-अलग बड़े शहरों में निर्दोष सिखों का कत्लेआम किया गया तथा उनकी जायदादों को लूटा, जलाया, जिससे हज़ारों सिखों के परिवारों के सदस्य मौत के ग्रास बन गए और हज़ारों बेघर हो गए। उन्होंने कहा कि दिल्ली के सिख कत्लेआम की कार्यवाही किसी भारतीय से छिपी नहीं। सिखों के आंसुओं को पोंछने के लिए कांग्रेस सरकार द्वारा सिख कत्लेआम की जांच के लिए कई कमीशन स्थापित किए जिन्होंने अपनी रिपोर्टों में असल दोषियों को नामजद किया। अन्य गैरसिख जत्थेबंदियों ने

भी अपनी रिपोर्टों में जगदीश टाईटलर को दोषी ठहराया। मगर सरकार ने ऐसे दोषियों को चुनाव में टिकट देकर व बाद में मंत्री बनाकर दुखी सिख परिवारों का मजाक उड़ाया है। बाकी कसर सी. बी. आई. ने टाईटलर का केस बंद करके पूरी कर दी। जत्थेदार अवतार सिंघ ने दुखी मन से कहा कि सरकार को अब बिना देर किए टाईटलर जैसे दोषियों को सजा देनी चाहिए।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब के निजी प्रकाशन पर लगेगी रोक : पंजाब सरकार

चंडीगढ़: पंजाब के मुख्यमंत्री स. प्रकाश सिंघ बादल की अध्यक्षता में १० अक्तूबर को हुई कैबिनेट की बैठक में श्री गुरू ग्रंथ साहिब की बीड़ के निजी तौर पर प्रिंटिंग, प्रकाशन और वितरण पर रोक लगाने के लिए कानून बनाने को मंजूरी दे दी गई है। वर्णनयोग्य है कि इस संबंध में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी तथा अन्य धार्मिक संगठनों द्वारा श्री गुरू ग्रंथ साहिब का अपमान रोकने के लिए कानून बनाने के लिए सरकार को आग्रह किया गया था। इस आर्डिनेंस को स्वीकृति मिलने के पश्चात श्री गुरू ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप प्रकाशित करने संबंधी सम्पूर्ण अधिकार शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को प्राप्त हो जाएंगे। पंजाब सरकार के प्रवक्ता ने बताया कि फतेहगढ़ साहिब में श्री गुरू ग्रंथ साहिब वर्ल्ड यूनीवर्सिटी स्थापित करने के लिए भी कैबिनेट ने मंजूरी दी है। यह ट्रस्ट एस. जी. पी. सी. का एक यूनिट है।

विद्वानों के पैनर्ल की सिफारश के बाद ही सिख इतिहास की पुस्तकें प्रकाशित होंगी : जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर: शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की कार्यकारिणी की एकत्रता में लिए गए निर्णय के अनुसार शि: गु: प्र: कमेटी द्वारा सिख इतिहास संबंधी छप चुकी पुस्तकों की पुनर्समीक्षा तथा नई पुस्तकों की प्रकाशना के लिए नामवर पांच सिख विद्वानों का पैनल गठित किया जाएगा। गठित पैनल की सिफारिश वाली पुस्तक ही शि: गु: प्र: कमेटी द्वारा प्रकाशित की जाया करेगी। इस पैनल के गठन के लिए पहले एक सब-कमेटी बनाई जाएगी जिसको बनाने के सम्पूर्ण अधिकार जत्थेदार अवतार सिंघ को दिए गए हैं। सब-कमेटी विद्वानों के नामों का सुझाव देगी और फिर उनमें से पांच सदस्यीय पैनल गठित किया जाएगा। गुरमति के क्षेत्र में कार्यरत विद्वानों को भी आग्रह किया गया है कि वे सिख इतिहास से संबंधित पुस्तकें शि: गु: प्र: कमेटी द्वारा गठित पैनल से स्वीकृति लेकर ही प्रकाशित करें।

■

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसैट प्रैस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। जारी करने की तिथि : ०१-१२-२००७